माइकेल मधुसूदन दत्त

रंगरस

832
८४ रं

माइकेल मधुसूदन दत्त बंगला साहित्य के अमर कवि और लेखक हैं; 'मेघनाद वध' जैसे अमर काव्य के रचयिता माइकेल ने दो प्रहसन भी रचे थे—'एकेई कि बले सभ्यता', एवं 'बुड़ो शालिकेर घाड़े रों' जो 'रंगरस' नामक इस संकलन में हिन्दी में पहली बार अनूदित रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। अनुवादक डॉ० अमल सरकार ने बंगला भाषा और हिन्दी की प्रकृति का पूरा ध्यान रखकर सफल अनुवाद किया है। अंग्रेजी शिक्षा और सभ्यता के नये फैशन ने हमारे नव-अंग्रेजी शिक्षित युवकों को, किस प्रकार पथ-भ्रष्ट और दुश्चरित्र बना दिया था, यह 'क्या यही सभ्यता कहलाती है ? नामक प्रहसन में प्रकट किया गया है। दूसरे प्रहसन 'बुढ़ापे की जवांनी' में माइकेल ने बूढ़े जमींदार की शोषक-प्रवृति और रसिक-लम्पटता का पर्दाफाश किया है। माइकेल का हास्य-व्यंग्य कितना मीठा और मार्मिक है, यह इन दोनों रचनाओं से स्पष्ट प्रकट होता है। इन प्रहसनों की मंचन-उपयोगिता भी प्रमाणित हो चुकी है।

रंगारंग

रंगरस

माइकेल मधुसूदन दत्त

प्रकाशक

शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली

अनुवादक : डॉ० अमल सरकार

SHARDA PRAKASHAN
Revised Price
डॉ. डिल्ली रमण
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
Ansari Road N.

9004
डॉ. डिल्ली रमण
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय

प्रथम संस्करण
1984

मूल्य
३०.०० रु०

शारदा प्रकाशन
•१६/ एफ-३ अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-११००३०
•३१/१ महरौली, नई दिल्ली-११००३०
द्वारा प्रकाशित

नवीन मुद्रणालय,
११५७६, सुभाष पार्क एक्स.
दिल्ली-११००३२
द्वारा मुद्रित

RANGRASA (Skits)
by Michel Madhusudan Dutta

श्री मधुसूदन दत्त का जन्म सन् १८२४ में बंगाल के यशोहर जिले के कपोताक्ष नदी के किनारे स्थित सागड़दांड़ि नामक गांव में एक प्रख्यात वकील परिवार में हुआ था. उनके पिता का नाम था राजनारायण दत्त और माता का जाह्णवी देवी. स्कूली जीवन से ही वह विदेशी भावधारा से प्रभावित थे और उन्नीसवें वर्ष में आपने ईसाई धर्म को ग्रहण किया. ऐसा लगता है कि मधुसूदन यदि ईसाई धर्म को ग्रहण न करते होते तो हम शायद मधुसूदन को महाकवि के रूप में नहीं देख पाते. इसी समय से वह माइकेल के नाम से परिचित हुए. इसके बाद उनके सामाजिक व आर्थिक जीवन में घात-प्रतिघात शुरू हुआ, परन्तु साथ-ही-साथ उनकी साहित्यिक प्रतिभा भी विकसित होने लगी. पहले माइकेल ने अंग्रेजी में लिखना आरम्भ किया लेकिन बाद में आपने मातृभाषा में अपनी साहित्यिक प्रतिभा का रूप देने का निर्णय किया.

बंगला साहित्य में उनका आविर्भाव मुख्यतया नाट्यकार के रूप में हुआ. उनके नाटकों का विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है—पौराणिक : 'शर्मिष्ठा' १८५९, 'पद्मावती' १८६०, ऐतिहासिक : 'कृष्णकुमारी' १८६१ एवं प्रहसन : 'एकेइ कि बले सभ्यता' १८६०, 'बुड़ो शालिकेर घाड़े रों' १८६०. नाट्यकार होते हुए भी वह स्वभावतः कवि थे. आपने ही बंगला तथा भारतीय साहित्य में सबसे पहले अमित्राक्षर छन्द (Blank verse) का प्रवर्तन किया– इसी छन्द में १८६० में 'तिलोत्तमासम्भव' काव्य का प्रकाशन हुआ. केवल 'ब्रजाँगना' काव्य (१८६१) को छोड़कर आपके सभी काव्यों की इसी छन्द में रचना हुई. इन काव्यों में 'मेघनाद-वध' (१८६१) व 'वीरांगना' (१८६२) काव्य सबसे मुख्य हैं.

'मेघनाद-वध' काव्य का हिन्दी रूपान्तर हिन्दी साहित्य के प्रख्यात कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने किया है. कवि-जीवन का शेष भाग बड़ा ही दुःखदाई है. साहित्य-गगन के एक विराट कवि को सन् १८७३ में एक दातव्य अस्पताल में अंतिम सांस लेनी पड़ी थी.

बीसवीं सदी के बंगाल में रेनेसां या नवजागरण का युग था. पुराने रस्म-रिवाजों को तोड़-मरोड़कर, झूठे बहमों को मिटा-कर एक नई दिशा की खोज में बंगाल जुट गया था. और उस जागरण के प्रमुख नेताओं में से माईकेल मधुसूदन का नाम सबसे पहले याद आ जाता है. बंगला भाषा व साहित्य की समृद्धि के लिए अमित्राक्षर छन्द के प्रवर्तक तथा महाकाव्य 'मेघनाथ-वध' के रचयिता मधुसूदन का एक बहुत बड़ा हाथ रहा. पहले जीवन में वह नाट्यकार के रूप में बंगला साहित्य जगत में आए, बाद में काव्य-महाकाव्य की रचना में उन्होंने अपनी अनोखी प्रतिभा का प्रमाण दिया. साथ-ही-साथ 'मेघनाद-वध' के कवि ने तात्कालीन समाज की त्रुटियों पर बारीकी से विचार किया और देशवासियों को चुनौती देना चाहा कि "तुम्हें मालूम नहीं कि नइया भुलावा देकर तुमको कहां ले चली है. इससे सचेत हो जाओ और सही रास्ते पर आने की चेष्टा करो".

सन् १८५९ में माईकेल ने अपना पहला पौराणिक नाटक 'शर्मिष्ठा' लिखा, इसके बाद लिखे 'पद्मावती' व 'कृष्ण-कुमारी'. परन्तु इसी समय १८६० में दो प्रहसन लिखे, एक का नाम है, 'एकेइ कि बले सभ्यता', दूसरे का 'बुड़ो शालिकेर घाड़े रों.'

माईकेल जो दो विभिन्न धर्मी रचना एक ही साथ लिख सकते

थे, उनके 'मेघनाथ-वध' और 'ब्रजांगना काव्य' उसका प्रमाण देते हैं। उनका 'शर्मिष्ठा' नाटक व उपरोक्त दो प्रहसन भी इसके साक्षी हैं. 'मेघनाथ-वध' में रक्षकुल के बड़प्पन को दर्शाने के लिए कवि जहां व्यस्त होते हैं, 'ब्रजांगना' में वह कृष्ण-प्रेम व लीला के वर्णन में तल्लीन हो जाते हैं. उसी प्रकार पौराणिक घटना के आधार पर जब कवि 'शर्मिष्ठा' में भाव-गम्भीर रचना के लिए उतारु होते हैं तो दो प्रहसनों में सहज व सरल रूप से समाज का सजीव चित्र उपस्थापित करने में कलम तोड़ने लगते हैं.

कलकत्ता के पाईकापाड़ा के जमींदार सिन्हा भ्राताओं के अनुरोध से माईकेल ने ये दो प्रहसन लिखे थे. अंग्रेजी सीखकर बंगाल के युवक अपने नैतिक चरित्र में कैसे भ्रष्ट हो जाते थे, वह एक में व्यंगात्मक शैली में उसी की सारी पोल खोल देते हैं. दूसरे में उन्होंने प्राचीन ब्राह्मण समाजपति कितने दुश्चरित्र होते थे, अपनी असामियों का शोषण करते, बूढ़े रसिक व बगुला भगत बने रहते थे, रसीले ढंग से इसी का वर्णन करते हैं. हालांकि 'एकेइ कि बले सभ्यता' में घटना-परम्परा नाममात्र दीख पड़ती है किन्तु 'बुड़ो शालिकेर घाड़े रों' में घटनाओं का समावेश हुआ है. जैसा कहा गया है, पहले प्रहसन में उन्होंने कलकत्ते के तरुण समाज पर आक्रमण किया और दूसरे में ग्राम-बंगाल के धार्मिक वेषी एक बूढ़े को प्रहसन का नायक बनाया. माईकेल ने जिस ढंग से तत्कालीन समाज, व्यक्ति, उनके बुरे चरित्र व नीतिभ्रष्टता का विश्लेषण किया था, बहुत दिनों तक इस पहलू में उनकी बराबरी करने वाला कोई नहीं पैदा हुआ. हालांकि दीनबन्धु मित्र जैसे सत्यदर्शी ने 'एकेइ कि बले सभ्यता' के ढंग पर अपनी 'सधवार एकादशी' की रचना की थी.

ये दो प्रहसन लोकप्रिय होने पर भी कलकत्ते के बेलगाछिया रंगमंच पर मंचस्थ नहीं हो सके. कारण यह था कि जब भी एक को मंचस्थ करने की योजना अपनाई जाती थी तो प्रतिपक्षी उसमें बाधा डालते थे. इससे माइकेल ने खेद के साथ एक बार अपने एक दोस्त को लिखा था कि अब वह बंगला में लिखना बन्द कर देंगे एवं हिब्रू व चीनी भाषा में लिखना शुरू करेंगे. फिर भी देश के दूसरे स्थानों में ये दो प्रहसन बार-बार अभिनीत हुए एवं दोनों को ही काफी लोकप्रियता मिली. गम्भीर रस के नाटक की रचना में माइकेल कहां तक सफल हुए, इस पर बहस हो सकती है, परन्तु इन दोनों प्रहसनों के लिए वे चिर अमर रहेंगे.

सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त जी ने माईकेल के 'मेघनाद-बध' का हिन्दी में अनुवाद किया था. प्रस्तुत अनुवाद उनके दो विश्रुत प्रहसनों का हिन्दी रूपान्तर करने का प्रयास मात्र है. अनुवाद का मूल्यांकन पाठकों पर सौंपा जाता है. जहां तक हो सके मूल भाव को हिन्दी में रखने की चेष्टा की गई है, लेखक-विरचित गीतों और कविताओं को भी हिन्दी में रूपान्तर किया गया है. इन सबों की यथार्थता का विचार पाठक करेंगे.

प्रस्तुत '**एकेइ कि बले सभ्यता**' का हिन्दी नामांकन किया गया '**क्या यही सभ्यता कहलाती है**', दूसरे प्रहसन जिसका बंगला नाम है '**बुड़ो शालिकेर घाड़े रों,**' का हिन्दी नाम दिया गया है '**बुढ़ापे की जवानी**'।

१०-१-१, रुस्तमजी स्ट्रीट
कलकत्ता-७०००१६

—**डां० अमल सरकार**

रंगरस

[माइकेल मधुसूदन दत्त के प्रहसन]

क्या यही सभ्यता कहलाती है ?
१३—५०

बुढ़ापे को जवानी
५१—६४

क्या यही सभ्यता कहलाती है ?

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

नव बाबू : अंग्रेजी फैशन का युवक
काली बाबू : नव बाबू का साथी नवयुवक
बोदे : नव बाबू का नौकर
बाबा जी : वैष्णव ब्राह्मण
चेतन, बलई, शिबू, महेश : नव बाबू की ज्ञानतरंगिणी सभा के सदस्य नवयुवक
कर्ता बाबू : नव बाबू के पिता, वैष्णव हिन्दू

इनके अतिरिक्त शराबी, सार्जेन्ट, चौकीदार, कुली, माली, बर्फ बेचने वाला, मंत्री, दरबान, खानसामा, बेयरा आदि।

स्त्री-पात्र

गृहिणी : ठकुराइन, नव बाबू की माँ
प्रसन्नमयी, नृत्यकाली, कमला, हरकामिनी : नवयुवतियाँ, परिचारिकाएं
नितम्बिनी, पयोधरी : दो नर्तकियां

पहला अंक

पहला दृश्य

नव कुमार बाबू का घर

[नव बाबू और काली बाबू बैठे हुए हैं]

काली—कौन-सा समाचार सुनाने को बुलाया है ?

नव—अरे क्या बताऊं। कई दिन हुए पिताजी वृन्दावन से लौटे हैं। अब तो मेरे लिए घर से बाहर जाना निहायत मुश्किल है।

काली—क्या बक रहे हो ? फिर तो कोई चारा निकालना ही पड़ेगा।

नव—क्या चारा निकालूं ? अब तो सभा को 'एबोलिश' करने के सिवाय दूसरा कोई चारा नहीं सूझता।

काली—अरे, तुम पागल हो गए हो क्या ? ऐसी सभा को 'ऐबोलिश' करने की सोच रहे हो ? इतने तूफानों का मुकाबला करते हुए नाव को इतनी दूर तक खेते आए, किनारे के नजदीक आकर हाथ खींच लेना क्या ठीक होगा ? तुम्हें मालूम है कि जब हमारी 'सब्सक्रिप्शन लिस्ट पुअर' थी हमीं लोगों ने अपनी जेब से रुपया दे देकर, इस सभा को 'सेव' किया था यानी बचाया था और अब···

नव—अरे, क्या मुझे इन बातों का पता नहीं जो तुम फिर से याद दिला रहे हो ? आखिर, क्या मैं अपनी इच्छा से इस सभा का खात्मा देखना चाहता हूं ? मगर करूं क्या ? न जाने पिताजी को अब क्या हो गया है। चन्द मिनटों के लिए भी आँखों से परे नहीं हो सकता । और हो भी जाऊं तो फौरन बुलावा आता है। तुम्हीं बताओ, अब क्या मैं सभा को 'ऐटेंड' कर सकता हूं । (**लम्बी सांस लेता है।**)

काली—क्या बला आ गई । तुम्हारी बातें सुनकर तो मेरा गला सूख गया भाई। अब बताओ नव, गला तर कर लेने के लिए घर में कुछ है या नहीं ?

नव—'हिश', इतने जोर से मत बोला करो, शायद एक ब्रांडी बची होगी।

काली—(**सोल्लास**) जस्ट दी मिंग ! तो लाओ न फिर !

नव—ठहरो, एक बार देख लूं (**चारों तरफ देख लेता है**) शायद पिताजी अब तक अपने कमरे में ही होंगे।

(ऊंची आवाज में) अबे, बोदे !

(आड़ में) आया जी ।

काली—भाई, आज रात को तुम्हें एक मर्तबा जाना ही पड़ेगा। (मन-ही-मन) हाय, यह बुड्ढा कम्बख्त आसमान का बादल जैसा कहां से टपक पड़ा और हमारे सारे लुत्फ का सत्यानाश करने को आ गया। नव के छोड़ जाने से हम लोगों को भारी नुकसान पहुंचेगा। वह हमारा लीडर है, और मनी मैटर यानी रुपये के मामले में वह हमारी काफी मदद करता है। उसके चले जाने से एक ठोस सहारा टूट जाएगा, इसमें कोई शक नहीं।

[बोदे का प्रवेश]

नव—पिताजी कहाँ हैं रे ?

बोदे—जी, वह अब तक कमरे के भीतर ही हैं।

नव—तो वह बोतल और एक गिलास जल्दी लेता आ।

[बोदे का प्रस्थान]

काली—अच्छा नव, तुम्हारे पिताजी क्या निरे वैष्णव हैं ?

नव—(लम्बी सांस भरता हुआ) वह कसक वाली बात क्यों पूछते हो ? मैं समझता हूं कि कलकत्ते में उन जैसा भक्त दूसरा कोई शख्स नहीं है।

[बोतल आदि लेकर बोदे फिर आता है।]

काली—इधर ले आ।

नव—जल्दी ले लो भाई ! अब वह रावण भी नहीं है, सोने की लंका भी नहीं है।

काली—न हो तो क्या हुआ। यह तो है (**बोतल दिखाकर**)। हाः, हाः (**शराब पीता है**)।

नव—अरे, यह क्या कर रहे हो !

काली—ठहरो भाई, और थोड़ा पी लूं। दोस्त, जो अच्छा जनरल होता है, मौके पर वह 'प्रविजन' बचाए रखता है, समझे ! (**फिर से शराब पीने लगता है**)

नव—(**बोदे को संकेत कर**) बोतल और गिलास लेता जा। और तुरन्त दो-चार पान लेकर आ।

[**बोदे का प्रस्थान**]

काली—अब चलो भाई, तुम्हारे पिताजी से एक बार मिला जाए। लेकिन आज तुम्हें सभा में जाना ही पड़ेगा, कौन साला तुम्हें छोड़ जाए।

[**पान लेकर बोदे फिर आता है**]

काली—दे, इधर दे !

(**आड़ से**) अरे बैजनाथ !

[**बोदे का प्रस्थान**]

नव—वह सुनो, पिताजी बाहर आ रहे हैं। लो, और एक पान लो।

काली—भाई, मैं तो अब पान खाना नहीं चाहता, मैं पान करना चाहता हूं। खैर ! जो भी हो, चलो, तुम्हारे पिताजी से मिलें।

नव—(**मुस्कराकर**) भाई, तुम्हें इतनी तकलीफ उठानी नहीं पड़ेगी। तुम्हारी गाड़ी को दरवाजे पर देखते ही पिताजी खुद ही यहाँ आ पहुंचेंगे।

काली—अच्छा, यह बात। फिर अपने नौकर से और ब्रांडी लाने को कहो, मेरा गला फिर से सूखने लगा है।

नव—ऐं, क्या कहते हो ? मालूम होता है, नशे ने तुम्हें पकड़ लिया है। फिर पीना चाहते हो ?

काली—अच्छा बाबा, फिर रहने दो। अच्छा, यह बताओ, तुम्हारे पिताजी यहाँ आएं तो उनसे क्या बोलूं ?

नव—बोलना क्या है, पहले उनके पैर छू लेना, फिर अपनी तारीफ बताना।

काली—अच्छा, अपने बारे में क्या बताऊं, यह तो बोलो। क्या उनसे यह बोलूं कि मैं बीयर से–माने गला··· खुद ही दब गया है···सोनागाछी में मेरे ससुर बसते हैं···नहीं, नहीं ! ससुर नहीं, सासों के घर हैं और विलसन के अखाड़े में महाप्रसाद पाता हूं। हाः हाः हाः···।

नव—क्या अंटशंट बक रहे हो ? सचमुच सोचने की बात है। उनसे क्या बोलोगे, क्या परिचय दोगे ? अच्छा, एक काम करो, किसी मशहूर वैष्णव परिवार का नाम ले सकोगे ? अगर ले सको तो कुछ नहीं कहना पड़ेगा।

काली—क्यों न ले सकूंगा ? तो फिर कुछ मिट्टी दो, उड़िया वेयारा की भांति नाक पर तिलक लगाए साधू बन बैठ जाऊं !

नय—नहीं, वैसा नहीं। (कुछ सोचकर) गराणहाटा का कोई घोष परम वैष्णव था, उसका नाम तुम्हें याद

है क्या ? वही जिसका लड़का हमारे साथ एक ही क्लास में पढ़ता था।

काली—भाई, मैं तो गराणहाटा की प्यारी व उसकी बेटी बिन्दी के सिवाय और किसी को नहीं जानता।

नव—भला, यह प्यारी कौन है ?

काली—अरे, वही गोदा प्यारी। ताज्जुब की बात है, तुमने प्यारी को नहीं पहचाना ? भइया, एक दिन मैंने और मदन ने उसके घर जाकर कितनी छेड़छाड़ की, कितना मजा लूटा, तुम्हें क्या बताएं ! खैर, इन बातों को जाने दो; अब सोचकर बोलो, तुम्हारे बापूजी से क्या कहा जाए।

नव—(सोचने लगता है) हां, याद आया। काली, तुम्हारे कोई चाचाजी वैष्णव थे न ? बाद में वृन्दावन जा कर जिनका देहान्त हो गया था ?

काली—हां, हां, एक 'ओल्ड फूल' था, उनका नाम था कृष्ण प्रसाद घोष।

नव—तो फिर, काम बन गया। तुम उन्हीं का परिचय देना। अपने बाप का नाम मत लेना।

काली—वाह, खूब कहा ! वाकई तेरी अक्ल है ! (हंसता है)

नव—अरे पगले, फिर तू हंसता क्यों है ?

काली—हाः, हाः। सो तो हुआ। लेकिन अब तो वैष्णवों की दो-एक पोथी के नाम जानना जरूरी है।

नव—तब तो तुमने कमाल किया, मैं तो इस मामले में इल्मे-फाजिल हूं। ठहरो, देखूं (कुछ देर तक सोचकर) हाँ याद आया, श्रीमद्भगवद्गीता, गीतगोविन्द।

काली—यह गीत क्या है ?

नव—जयदेव का गीत गोविन्द।

काली—यानी जैसे श्रीमती भगवती का गीत, बिन्दा दूती का गीत…।

नव—हा:, हा:, दोस्त की कैसी अद्‌भुत स्मृतिशक्ति !

काली—क्यों, ऐसा क्यों कहते हो ?

नव—हिश ! पिताजी आ रहे हैं ! हां, ब्रदर, पहले सिर झुका कर विनम्र भाव से प्रणाम करना।

[पिताजी का प्रवेश]

(काली प्रणाम करता है।)

पिता—जीते रहो बेटा ! बेटा, तुम्हारा नाम क्या है ?

काली—जी, मेरा नाम है श्री कालीनाथ दास घोष। जी, आप शायद कृष्ण प्रसाद घोष को जानते थे। मैं उन्हीं का भतीजा लगता हूं।

पिता—कौन कृष्ण प्रसाद घोष ?

काली—जी, बांसब्रेड़े के !

पिता—अच्छा, तुम उन स्वर्गीय कृष्ण प्रसाद घोष महाशय के भतीजे हो जिन्होंने वृन्दावन धाम में स्वर्ग सिधारा ?

काली—जी हां।

पिता—आयु बनी रहे तुम्हारी बेटा ! बैठो, बैठो ! (सब बैठते हैं) आजकल तुम क्या करते हो, बेटा ?

काली—जी, मैं नवकुमार बाबू के साथ एक ही क्लास में पढ़ा करता था, अब नौकरी की तलाश में हूं।

पिता—बहुत खूब ! बेटा, तुम्हारे स्वर्गीय चाचाजी मेरे परम मित्र थे और इस नाते मैं तुम्हारा ताऊ लगता हूं। कृष्णप्रसाद के भतीजे हो न !

काली—ताऊजी, आज एक बार नवदादा को मेरे साथ जाने की इजाजत दीजिएगा ?

पिता—क्यों बेटे, तुम लोग जाओगे कहाँ ?

काली—जी, हम लोगों की ज्ञानतरंगिणी नाम की एक सभा है, आज वहीं एक मीटिंग बुलाई गई है।

पिता—कौन सी सभा कही ?

काली—जी, ज्ञानतरंगिणी सभा।

पिता—उस सभा में क्या होता है ?

काली—जी, कालेज में तो सिर्फ अंग्रेजी की चर्चा हुई थी, लेकिन राष्ट्रभाषा भी थोड़ी कुछ जानना जरूरी है, इसलिए संस्कृत भाषा के विमर्श के लिए इस सभा की स्थापना की गई। हर शनिवार को हम वहाँ इकट्ठे होते हैं और धर्मशास्त्र की चर्चा करते हैं।

पिता—वाह, वाह ! (मन-ही-मन) करेगा क्यों नहीं—कृष्ण प्रसाद का भतीजा है न ! और इस नवकुमार को जन्म तो मैंने ही दिया है। (प्रगट रूप से) अच्छा, तुम लोगों के गुरुजी कौन हैं ?

काली—जी, केनाराम वाचस्पति महाशय, जो संस्कृत कालेज के प्रधान अध्यापक हैं।

पिता—अच्छा, यह बताओ, इस सिलसिले में तुम लोग कौन-सी पुस्तकों का अध्ययन करते हो ?

काली—(मन-ही-मन) अब मारा गया। (व्यग्र रूप से) जी,

श्रीमती भगवती का गीत और बोपदेव की विन्दा-
दुती !

पिता—क्या नाम बताए ?

नव—जी, वह कहता है श्रीमद्भगवद्गीता और जयदेव का गीतगोविन्द ।

पिता—(**सोल्लास**) जयदेव ! ओ हो, कवि शिरोमणि जयदेव ! भक्तिरस-सागर जयदेव !

काली—बड़े चाचाजी, अगर इजाजत दें तो अब हम सभा में जाएं ?

पिता—क्यों, इतनी जल्दी क्यों, अभी तो पांच भी नहीं बजे हैं ?

काली—जी, हम लोगों का जल्दी-जल्दी काम निबटाने का इरादा है, इसलिए जल्दी जाना चाहते हैं । ज्यादा रात तक जागने से कहीं बीमार न पड़ जाएं, इस डर से हम सब जल्दी मिलना चाहते हैं ।

पिता—अच्छा, तुम लोगों की यह जगह कहाँ है ?

काली—जी, सिकदार पाड़ा की गली में ।

पिता—अच्छा, तो फिर ठीक है, जाओ । देखना, कहीं ज्यादा रात न हो जाए ।

नव व काली—(**एक साथ**) नहीं जी !

[**दोनों का प्रस्थान**]

पिता—(**मन-ही-मन**) यह कलकत्ता अजीब शहर है, हर कदम पर खौफ लगा रहता है । बेटे को अकेला छोड़कर क्या मैंने ठीक किया है ? (**सोचकर**)

बाबाजी को एक बार भेज दूं। देख आएं क्या मामला है। मुझे डर-सा लग रहा है—नव को अकेला छोड़कर मैंने अच्छा नहीं किया।

[प्रस्थान]

द्वितीय दृश्य

सिकदार पाड़ा स्ट्रीट

[बाबाजी का प्रवेश]

बाबाजी—**(मन-ही-मन)** यही तो सिकदार पाड़ा की गली है। नव बाबू का सभा-भवन यहीं कहीं होगा। राधे-कृष्ण ! **(घूमता है)** देखूं, शायद यही मकान है। **(दरवाजा खटखटाता है)**

(नेपथ्य से) कौन है रे ? किसे ढूंढता है ?

बाबाजी—जो, यही क्या ज्ञानतरंगिणी सभा का मकान है ? **(नेपथ्य से)** अरी फूंटी, देख तो सही, दरवाजे पर कोई शराबी धक्का दे रहा होगा। थोड़ा पानी ले आ और उसके सिर पर डाल दे।

बाबाजी—**(मन-ही-मन)** प्रभो, यह भी तुम्हारी मर्जी थी—राम, राम ! इतने दिन बाद शराबी का नाम पाया ! **(नेपथ्य से)** तू कौन है बे। भाग जा, वरना अभी चौकीदार को बुला लाऊंगी।

बाबाजी—(तुरन्त वहां से भागता हुआ, गुस्से से) यह क्या बला ! राधे किशन ! मालिक के पास क्या और कोई नहीं था जो मुझे ही यहाँ भेज दिया। (वहां से हट जाता है) मालूम होता है कोई सज्जन इधर आ रहे हैं। देखूं, उनसे पूछकर देखूँ !

[एक शराबी का प्रवेश]

शराबी—(बाबाजी को सिर से पैर तक देखकर) अबे, यह तो बता, यहां कहाँ तमाशा खेला जा रहा है ?

बाबाजी—भला, यह मैं कैसे बोलूं ?

शराबी—नहीं बोल सकता ? लेकिन तुमने चेहरे को तो बनावटी काफी बनाया है !

बाबाजी—राधे कृष्ण !

शराबी—तो साले, फिर यहाँ क्या करने को आया है ?

बाबाजी—भला, यह कैसी आफत, कैसा झंझट ! राधे कृष्ण ! क्या इस गली में कोई शिष्ट आदमी नहीं रहता है ? यह फिर कौन आ रहे हैं ? (देखता हुआ)—अरे, ये तो दो औरतें ! देखने में भी बदसूरत नहीं हैं। ये कौन हैं ? हरे कृष्ण, हरे कृष्ण ! (एकटक देखने लगता है)

[पीछे की तरफ देखते हुए दो वेश्याओं का प्रवेश]

पहली—अरी बामा ! देखा तूने। गुरो बेशर्म का बर्ताव देखा तूने। हम लोगों के साथ आ रहा था, झट से कहां गायब हो गया !

दूसरी—मालूम होता है, वह चुपके से पदी के यहां घुस गया है। तेरा नसीब ही ऐसा है, वरना इस बेहुदे के साथ

तेरा पाला पड़ा। अगर मैं होती तो अब तक उसे भगाकर निकाल देती।

पहली—ठीक है, पहले घर पहुंचने तो दे। आज झाड़ू से खबर लूंगी। मैं ऐसी-वैसी औरत नहीं हूं। इस उम्र में मैंने सैकड़ों के नाकोंदम कर छोड़ा है। चल, पहले मदनमोहन के दर्शन कर आऊं, फिर उसकी मरम्मत करूंगी।

दूसरी—अगर तू वैसा कर सकी तो फिक्र की कोई बात नहीं। अच्छा, देख तो सही मुल्ला की तरह बिना कच्छ के कपड़ा पहने वहां कौन खड़ा है ?

पहली—हां, तूने तो ठीक कहा। ऐसा ही तो कोई नजर आ रहा है। अरी, वह तो हम लोगों की तरफ ही आ रहा है। अरी बामा, यह तो कोई मुल्ला नहीं, कोई रसिक वैरागी साधू मालूम होता है। वह देख, हाथ में झोली। (**हंसकर**) ओ हो, देख, देख, आदमी का ढोंग देख, जैसे तुलसीवन का शेर !

बाबाजी—(**नजदीक आकर**) क्यों, तुम लोग बता सकती हो, यहां ज्ञानतरंगिणी सभा कहां है ?

दूसरी—यह तरंगिणी कौन है जी ? (**दूसरी की बाँहें पकड़कर हंसती है**) बाबाजी, यह तरंगिणी तुम्हारी प्यारी का नाम है क्या ?

पहली—बाबाजी, अपनी प्यारी क्या खो गई है ? तो रास्ते में भटककर रोने से क्या फायदा ? जो हो गया सो हो गया। क्या करोगे बोलो ? अब हमारे साथ चलो तो बोलो ! क्यों री वामा, तू सम्हाल लेगी न ?

दूसरी—क्यों नहीं। सवा रुपया मिल जाए तो सम्हाल लूंगी। क्यों बाबाजी, ठीक है न ?

पहली—बाबाजी क्या कहेगा। चल हरि बोल पुकारती हुई बाबाजी को ले चलें। बोल हरि, हरि बोल।

बाबाजी—(मन-ही-मन) यह भला कैसी उलझन। राधेकृष्ण ! (प्रगट रूप में) नहीं भाई, तुम लोग जाओ, मेरा कसूर हुआ है, मुझे माफ कर दो।

दूसरी—हां, हम लोगों को तो जाना ही पड़ेगा। तुम्हें तो तरंगिणी के सिवाय मन नहीं भरेगा। ठीक है, हम लोग जाते हैं, तुम यहीं खड़े-खड़े रोते रहो। (बाबाजी के मुंह के सामने हाथ फेरती हुई) प्राण की प्यारी मेरी तरंगिणी खो गई है।

[दोनों वेश्याओं का प्रस्थान]

बाबाजी—कैसी आफत में फंस गए। भाग्य में इतनी परेशानी थी। सभा कहां है, लोग कहां हैं। सिर्फ परेशानी ही परेशानी। (घूमता हुआ) इस समय अगर लौट जाऊं तो मालिक को गुस्सा होगा। न आगे नाथ न पीछे पगहा। अब करूं क्या ? (कुछ देर तक सोचने लगता है, फिर सामने की ओर देखता है) वह कोई मुश्किल-आसान आ रहा होगा, उसके पीछे की रोशनी की आड़ में छिप जाऊं। अरे नहीं। यह तो सार्जेंट साहब हैं। रौंड लगाने निकला होगा। यहां चुपचाप खड़ा देखने से यदि चोर समझ पकड़ बैठे। लेकिन अब जाऊं कहाँ। (सोचता है) इस आड़ में खड़ा हो

जाऊं। अरे बाप रे! वह तो आ ही पहुंचा। (दौड़ भागता है)

[सार्जेंट व लालटेन लेकर चौकीदार का प्रवेश]

सार्ज.—हैलो चौकीडर! एक आदमी उढार डौर के गिया नहीं?

चौकी.—नहीं साहब! हम तो कुछ नहीं देखा।

सार्ज.—अलबट गिया है, यू डैम! टोम जल्डी डौर के जाओ, जल्डी जाओ, यू सूअर!

चौकी.—(तुरन्त दौड़ता है) कौन है रे, खड़े रहो।

सार्ज.—डैम योर आइज। इढर, यू फूल!

चौकी.—(डर से) हां छाब, इधर (जल्दी भागता है)।

सार्ज—(क्रोध के मारे) ओ: ! इफ आई कैन कैच हिम!

(नेपथ्य से चिल्लाता हुआ) पकड़ो, पकड़ो! उहूं, उहूं।

(नेपथ्य से) हम आते हैं बाबा, और मारना नहीं—दुहाई तुम्हारी, तेरा गोर लगा—

(नेपथ्य से) साला चोर कहीं का, तुम्हारे वास्ते दौड़ के हमारा जान गिया।

(नेपथ्य से) उहूं उहूं—बाबा, मैं कोई चोर नहीं हूं—मैं एक भिखमंगा वैष्णव हूं, बाबा।

[बाबाजी को लिए चौकीदार का प्रवेश]

सार्ज.—आ: यू! टोम चोट्टा है?

बाबा—(डर के साथ) नहीं साहब! बाबा, मैं कुछ नहीं जानता, मैं—ग्ये, ग्ये…।

सार्ज.—हैंग योर ग्ये, ग्ये—चोप राओ, यू ब्लडी नीगर, डेक-

लाओ टोमारा बैग में किया है। (माला जबरन छीन लेता है और खुद पहन लेता है) हा, हा, हा ! बाप रे बाप—हाम बड़ा हिंदु हुआ—राढे, किराडे, हा, हा, हा !

बाबा—(डर से) दुहाई, साहब जी, मैं गरीब वैष्णव हूं, मैं कुछ नहीं जानता, दुहाई बाबा, मुझे छोड़ दो। (जाने को होता है)

चौकी.—खड़े रहो, साले !

बाबा—दुहाई कम्पनी की, दुहाई कम्पनी की !

सार्ज.—होल्ड योर टंग, य ब्लैक ब्रूट ! इस बैग में आओर किया है डेकेगा। (झोली खींच लेता है और चार रुपये गिर पड़ते हैं)

सार्ज.—दैट्स राइट। यू सीटी डेवल। केस्का चोरी किया ? (चौकीदार को) ओस्को ठाने में ले चलो।

बाबा—कसम साहब की, मैंने चोरी नहीं की। मुझे छोड़ दो—दुहाई धर्मावतार, मैं वे रुपये नहीं चाहता।

सार्ज.—सो नेइ होगा, टोम ठाने में चलो। किया टोम जागे नेई ? अलबट जाने होगा।

चौकी.—चल बे, थाने में चल।

बाबा—दुहाई कम्पनी की ! मैं रुपये-सुपये कुछ नहीं चाहता, रुपये लेकर जो चाहो करो बाबा, लेकिन मुझे छोड़ दो बाबा !

सार्ज.—(हंसता हुआ) किया ? टोम नेइ मांगता। (रुपये अपनी जेब में डालकर चौकीदार को) वेल देन, हाम डेकता

ओस्का कुच कसूर नेई, ओस्को छोड़ देओ।

बाबाजी—(सहर्ष) जय महाप्रभु !

चौकी.—(बाबाजी को आहिस्ता-आहिस्ता) तोम हामको तो कुछ दिया नहीं, अच्छा जाओ, चले जाओ।

बाबा—नहीं भाई, मैं एक ज्ञानतरंगिणी सभा को जाऊंगा।

चौकी.—हाँ, हाँ, उस कोठी में, बड़े मजे की जगह है।

सार्ज.—डेको चौकीडार, रोपया का वाट (अपने होंठों पर उंगली डालता है)

चौकी.—जो हुक्म !

सार्ज.—मम्। इज दी वार्ड माई बॉय। आवि चलो।

[सार्जेंट व चौकीदार का प्रस्थान]

बाबा—राधे कृष्ण ! बच गया ! आज किस अशुभ लग्न में घर से निकला था, कौन जाने ! सौभाग्यवश कुछ रुपये साथ में थे, सार्जेंट को घूस लेने की आदत है, तभी तो बच गया। वरना आज हवालात में ही रहना पड़ता या और कुछ होता, कौन जाने !

[होटल बक्से ले दो कुलियों का प्रवेश]

यह फिर क्या ? राधेकृष्ण—कैसी बदबू निकल रही है ! ये बेहूदे यहाँ क्या ला रहे हैं ! (रुक जाता है)

पहला—आज न-जाने कितना माल साफ कर दिया है ! भाई, कितना वजन, मेरी गर्दन तो टेढ़ी-सी हो गई है।

दूसरा—देख मामा, ये हिन्दू लोग दुनिया को भोग रहे हैं। जरा सोच, ये कैसा ऐश करते हैं !

पहला—अरे भाड़ में जाएं तेरे हिन्दू लोग। उन हरामखोरों का रखा भी क्या है? वे न अल्लाह को मानते हैं और न पैगम्बर को।

दूसरा—लेकिन मामा, मैं सच बताता हूं कि हम जैसे मांस खाने वालों के जरिए इन्हें इतना आराम पहुंचता है। शाम होते ही ये लोग गीदड़ों की भांति आ झपटते हैं, ठोंस-ठोंस कर खाते हैं, पीते हैं।

पहला—अब तो किसी दरबान को बुला, हम दोनों को क्या सारी रात यहीं खड़े-खड़े काटना पड़ेगा। माड़बार का वह साला गया कहां।

(नेपथ्य से) कौन है रे!

पहला—हम लोग हैं भाई, पोंचघर के मुटिए भाई।

(नेपथ्य से) आ जाओ, अन्दर चले आओ।

[**कुलियों का प्रवेश**]

बाबा—**(आगे बढ़कर स्वागत करता है)** क्या आश्चर्य? ये सब काहे की पेटियां हैं? थूः थूः, राधे कृष्ण! ज्ञानतरंगिणी सभा के बारे में मुझे कुछ नहीं सूझता।

(नेपथ्य से) बेलफूल, चाहिए बेलफूल।

(नेपथ्य से) चाहिए, बर्फ चाहिए, बर्फ।

[**माली व बर्फवाले का प्रवेश**]

माली—बेलफूल। दरबानजी, बाबूलोग आ गए हैं, क्या?

(नेपथ्य से) नहीं, अभी तक नहीं आए, थोड़ी देर में आ जाना।

बर्फ.—बर्फ चाहिए, दरबान जी।

(नेपथ्य से) तुम भी थोड़ी देर में आ जाना।

[माली व बर्फवाले का प्रस्थान]

बाबा—(मन-ही-मन) मेरी समझ में नहीं आता यह सब क्या हो रहा है!

(नेपथ्य से) बेलफूल चाहिए, चाहिए बर्फ।

[यंत्रियों के साथ नितम्बिनी व पयोधरी का प्रवेश]

नित.—कालीबाबू ने कल जो ब्राँडी मुझे पिला दी थी उससे आज भी मेरा सिर चक्कर खा रहा है। बहन, सोच रही हूं, आज मैं कैसे नाचूंगी?

पयो.—मेरे यहां भी सदानन्द बाबू ने भारी धूम मचाई थी। आजकल सदानन्द बड़ा चलता-पुर्जा बन गया है। ऐसा दोस्त मिलना सचमुच मुश्किल है।

यंत्री—चलो, अब अन्दर चला जाए। अरे, दरबान जी, तुम कहाँ हो?

(नेपथ्य से) कौन है?

पयो.—अरे, पहले दरवाजा तो खोलो, फिर 'कौन है' को देखो।

(नेपथ्य से) ओ हो, आप लोग हैं! अभी आया बहन जी, आइए, आइए।

[यंत्रियों का प्रस्थान]

बाबा—(आगे बढ़कर मन-ही-मन) यह क्या ताज्जुब की बात है! ये तो सब बाईजी मालूम होती हैं। सत्यानाश! अब मैं समझा, क्या मामला है। नवकुमार जहन्नुम

में गया है। अगर मालिक को यह मालूम हो जाए तो किसी को नहीं छोड़ेंगे।

[नव व काली का प्रवेश]

नव—(हंसता हुआ) ओ हो! श्रीमती भगवती का गीत। भाई, तुम्हारी कैसी मेमरी है। (फिर हंसने लगता है)

काली—अरे, ये सब फिजूल किताबें मैंने क्या कभी देखी हैं या पढ़ी हैं, जो याद रखूं।

नव—(बाबाजी को देखकर) अरे, यह क्या, यह तो बाबाजी खड़े हैं! काली, मैंने तुमसे कहा था न कि पिताजी किसी-न-किसी को मेरा पीछा करने को भेजेंगे। इसे जो पहले ही हमने देख लिया है, यह हमारा अहोभाग्य ही समझो।

काली—अगर कहो तो उस वैष्णव साले को पकड़ के ले आऊं और फाउल कटलेट या मटन चाप खिला दूं—साले का जन्म भी सार्थक हो जाएगा।

नव—जबान थाम लो। भाई, यह कोई मजाक की बात नहीं। (आगे बढ़कर) क्यों बाबाजी! यहां कैसे आ पड़े?

बाबा—नहीं, ऐसी कोई बात नहीं, काम पै इधर से गुजर रहा था, सोचा कि नव बाबू के सभा भवन को भी एक बार आंखों से देख लूं।

नव—अच्छा, तो यह बात! तो फिर चलिए, अन्दर चलिए।

काली—(मन-ही-मन नव को लक्ष्य कर) अरे, पागल हो गया

है क्या ? इसे अन्दर ले जाकर क्या फायदा ? वहाँ तो हम लोगों ने कोई हरिवासर नहीं बिठाया है।

नव—(**आड़ से काली के प्रति**) अरे चुप्पी मार यार। (**प्रगट रूप में बाबाजी को**) बाबाजी, क्या एक बार अन्दर आने की कृपा न कीजिएगा।

बाबा—नहीं, नवबाबू, मुझे काम है, तुम लोग जाओ।

[**प्रस्थान**]

काली—अगर तू चाहे तो साले को झट से पकड़ लें और दो-चार तमाचे जड़ दें।

नव—दरबान जी !

[**दरबान का प्रवेश**[

दरबान—हुजूर !

नव—सब लोग आ गए ?

दरबान—जी हुजूर।

नव—अच्छा, तुम जाओ।

दरबान—जो हुक्म, सरकार। (**प्रस्थान**)

नव—आज मालूम होता है, यह बाबाजी पिताजी को कुछ उल्टा-सुल्टा बतावेगा। शायद उन औरतों के घर जाने को देख लिया होगा।

काली—तुम तो बड़े कॉवर्ड हो। कोई मॉरल करेज है नहीं। उस साले से डरते हो।

नव—नहीं भाई, तुम यह सब नहीं समझोगे। चलो, देखें उसकी जेब में कुछ डालकर उसका मुँह बन्द किया जा सकता है या नहीं।

काली—नान्सेन्स ! इससे तो बेहतर होगा कि उसे दो-चार किक देकर सीधा बैकुण्ठ भेज दिया जाए। डैम दी ब्रूट। उस साले को दुनिया में कौन चाहता है ? क्या उसकी कोई मिशन है ?

नव—अरे पगले ! यह कोई बच्चों का काम नहीं, चलो, हम दोनों ही उसके पास चलें।

[दोनों का प्रस्थान]

द्वितीय अंक

पहला दृश्य

सभा

कई बाबू आते हैं

चेतन—आज जो नव व काली इतनी देर कर रहे हैं, इसकी क्या वजह है ?

बलाई—तुम्हें मैं कैसे कहूं ? अरे, उन दोनों की फिक्र मत करो, वे तो हर चीज पर अपना रोब डालना चाहते हैं, और सोचते हैं मानो उनके न होने से कोई काम नहीं बनेगा।

शिबू—जो भी कहो, पर पढ़ाई-लिखाई में उन दोनों का ही सबसे अच्छा ज्ञान है।

बलाई—बिटउइन ऑवरसेल्वस, ऐसा खास क्या जानते हैं वे ?

महेश—हाँ, हाँ, सबों के इल्म की हद मुझे मालूम है। उस दिन नव ने जो चिट्ठी लिखी थी वह तो तुमने पढ़ी ही होगी। याद है, उसमें जिंदगी भर की दुर्दशा का किस्सा !

बलाई—फिर भी उसकी प्राइड की सोचो। काली तो नव से भी एक कदम बढ़कर है।

चैतन—अरे, वे हमारे दोस्त हैं। इन सब बातों से क्या फायदा है ? जरा सोचो भी कि खासकर उन दोनों के रहने के कारण ही सभा आजतक टिकी हुई है।

महेश—भाई, ट्रुथ बताऊंगा, तो इसमें फ्रेंड का क्या सवाल है।

बलाई—अच्छा, अच्छा, इन बातों को जाने दो। हम लोग भी तो मेम्बर हैं, उन दोनों के लिए और इन्तजार करने की क्या जरूरत है ?

शिबू—हां, बात तो सही है। हम लोगों का कोरम तो बन ही गया है। तो फिर अब सभा का काम चालू कर दिया जाए।

महेश—हियर, हियर ! मैं इस मोशन को सेकंड कर रहा हूं।

बलाई—देख रहा हूं, इसमें किसी को कोई ऑबजेक्शन नहीं है, एक बार नेम कम, ब्रावो।

महेश—(घड़ी देखकर) नौ बजने में सिर्फ पांच मिनट बाकी हैं, मालूम होता है, नव और काली आज नहीं

आएंगे। तो मैं चेतन बाबू को चेयरमैन प्रोपोज करता हूं।

सब—हियर, हियर !

चेतन—(खड़ा होकर) जेण्टलमैन, जिस पद का भार आप लोगों ने कृपा कर मुझ पर सौंपा है, उसका सारा काम मैं दिलोजान से पूरा करने की चेष्टा करूंगा—नाऊ टु बिजनेस।

सब—हियर, हियर, (ताली बजती है)।

चेतन—(ऊंची आवाज से) खानसामा, बेयरा।

(नेपथ्य से) जी, हुजूर।

चेतन—दो-चार ब्रांडी और तम्बाखू ले आ। (बैठकर) अगर किसी को बीयर की इच्छा है, तो बोलो।

बलाई—इस वक्त साला कौन बीयर पीता है।

सब—हियर, हियर !

[शराब और तम्बाखू ले खानसामा व बेयरा का प्रवेश]

चेतन—सब बाबू लोगों को शराब बांट दो (सब पीने लगते हैं) बोतल और गिलास यहीं धर दो।

खान.—जो हुक्म।

चेतन—बेयरा। बाईजियों को बुला दो और देखो, थोड़ा-सा बर्फ ले आओ।

बेयरा—जी, अभी लाया। (प्रस्थान)

बलाई—मैं हमारे नए चेयरमैन का हेल्थ ड्रिंक करना चाहता हूं।

सब—हियर, हियर (शराब पीकर) हिप, हिप, हुर्रे, हुर्रे।

[नितम्बिनी, पयोधरी व यंत्रियों का प्रवेश]

चेतन—अरी, आओ, आओ, पधारो, बैठो। बोलो, मुझे पहचान लिया न। तबीयत अच्छी तो है? (सब बैठते हैं)

नित.—जैसा आप लोगों ने रखा है।

चेतन—मैंने तुम्हें कहां रखा है। ऐसा भाग्य क्या मैंने किया है?

सब—ब्रावो, हियर, हियर (ताली बजाते हैं)।

चेतन—अरी पयोधरी, तुम जरा इधर खिसक के बैठो न।

पयो.—नहीं जी, मैं यहीं ठीक हूं।

चेतन—(दूसरी को लक्ष्य कर) बलाई बाबू, इन्हें कुछ पिलाओ न।

बलाई—आओ भाई सब (सब शराब पीते हैं)।

शिबू—(एक सभ्य के प्रति) अबे साला, तू सोता है क्या?

महेश—(अंगड़ाई लेता हुआ) नहीं, नहीं, सोऊंगा क्या? नव अभी तक नहीं आया?

सब—(हंसते हुए) ब्रावो ब्रावो।

चेतन—(पयोधरी का हाथ अपने हाथ में लेकर) एक गाना गाओ न।

पयो.—थोड़ी देर बाद को गाऊं, क्यों?

चेतन—नहीं, बाद में क्यों? शुभ काम में देर नहीं होनी चाहिए।

पयो.—ठीक है, मैं गाती हूँ। (यंत्रियों को लक्ष्य कर) आड़-खेमट।

गीत

(रागिनी शंकरा, ताल खेमट)

नागर, क्या दिल में तेरे,
है कोई घर लिए मेरे,
नए इश्क में भूल गए,
आशिक जो थे कभी तेरे,
अगर अब पुराना प्यार होता,
तुझसे मेरा मिलन होता,
अब अश्क का दुखड़ा मेरे लिए,
चैन की दुनिया तेरे लिए,
किस नए को अपना लिया,
किस नए में मन डुबाया,
पुराने को तुम भूल गए
नागर, क्या दिल में तेरे !

सब—क्या बात, क्या बात, बहुत खूब ! जीती रहो जी, बनी रहो जी।

चेतन—बलाई बाबू, तुम कैसी साकी हो जी ?

बलाई—यह साकी क्या है ?

चेतन—जो शराब बाँटती है उसे फारसी में साकी कहते हैं।

शिबू—(गाकर) 'गर यार नहीं साकी' तो, जुट जाओ सब।

[सब शराब पीने लगते हैं।]

चेतन—खामोश, कोई ऊपर आ रहा है।

बलाई—शायद नव और काली !

[नव व काली का प्रवेश]

सब—(खड़े होकर) हिप हिप हुर्रे।

काली—(सोल्लास) हुर्रे, हुर्रे।

नव—बैठो दोस्तो (सब बैठते हैं)। देखो भाई, तुम सबों को हमें माफ करना पड़ेगा, हम दोनों का कुछ काम था, देर हो गई है।

शिबू—(ऊंची आवाज से) दैट्स ए लाई।

नव—(क्रुद्ध होकर) हो यार, तुमने मुझे लायर कहा, तुम्हें मालूम है कि अभी मैं तुम्हें शट कर सकता हूं।

चेतन—(नव को पकड़ के बिठाता है) जाने दो यार! एक ट्रिफलिंग बात लेकर क्यों नाहक झगड़ रहे हो?

नव—ट्रिफलिंग! उसने मुझे लायर कहा और तुम कहते हो ट्रिफलिंग! वह मुझे देसी भाषा में क्यों नहीं बोला? वह मुझे 'झूठा' कह सकता था। इस पर मुझे कभी गुस्सा न आता। लेकिन, लायर, इस लफ्ज को मैं कभी बरदाश्त नहीं कर सकता।

चेतन—अरे, जाने भी दो, उसका और जिक्र मत करो

[बैठता है]

नव—क्यों मेरी पयोधरी, नितम्बिनी, तुम लोग अच्छी तो हो?

पयो.—हाँ, हम लोग अच्छी हैं, पर आप तो अच्छे नहीं दीखते, अब आपको शांत देखने से हमें राहत मिलती है।

नव—मैं तो शांत ही हूं, लेकिन अब मैं गर्म होऊंगा। अरे

बलाई, थोड़ो-सी ब्राँडी दो न।

सब—भाई, हम लोगों को भूलना मत। (**सब शराब पीते हैं**)

नव—काली, तुम जो चुप्पी मार बैठे हो।

काली—मैं उस वैष्णव साले की अदाओं से दंग रह गया। साला इधर माला जपता है, उधर घूस लेकर झूठ बोलता है। साले, कैसा हिपोक्रीट है!

नव—अरे जाने दो वैष्णव को भाड़ में। पयोधरी, एक बार उठो न, हम तुम्हारा नाच देखें।

सब—नहीं, नहीं, पहले तुम्हारी स्पीच।

नव—(**खड़ा होकर**) अच्छा, भाई, वही सही। जेण्टलमैन, आप लोग सब एक मर्तबा उस दीवार की तरफ नजर डालें। ये जो कई अक्षर देख रहे हैं, इन सबों को इकट्ठा कर हम 'ज्ञानतरंगिणी सभा' पढ़ लेते हैं।

सब—हियर, हियर!

नव—जेण्टलमैन, इस सभा का नाम 'ज्ञानतरंगिणी सभा' पडा है—हम लोग सब इसके मेम्बर हैं। हम लोग यहाँ पर इसलिए 'मीट' करते हैं कि हमारी कुछ ज्ञान-प्राप्ति हो, ऐण्ड यू आर जॉली गुड फेलोज।

सब—हियर, हियर! वी आर जॉली गुड फेलोज।

नव—जेण्टलमैन, हम सबों का हिन्दू कुल में जन्म हुआ है, लेकिन इल्म के जरिए हम लोग जंजीर काटकर 'फ्री' बने हैं। बूते देखकर हम घुटने टेकना नहीं मानते, ज्ञान के प्रकाश से हमारा अंधेरा टट गया

है। अब तुम लोगों से मेरी विनीत प्रार्थना है कि तुम सब जी-जान तोड़कर इस देश में कैसे सोशल रिफरमेशन लाया जाए, उसकी कोशिश करो।

सब—हियर, हियर !

नव—जेण्टलमैन, अपनी औरतों को एजुकेट करो, उन्हें आजादी दो, जाति-पाँति, छुआछूत को मिटा दो, बेवाओं की शादी कराओ, बस इसी से, सिर्फ इसी से, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान इंग्लैंड आदि सभ्य देशों से टक्कर ले सकेगा—वरना नहीं।

सब—हियर, हियर !

नव—मगर जेण्टलमैन, अब यह देश हमारे लिए एक बड़ा कैदखाना जैसा है। यह भवन हमारा लिबर्टी हॉल है यानी आजादी की इमारत है। यहां जिस की जो मर्जी हो, वही करे। जेण्टलमैन, इन दी नेम ऑफ फ्रीडम लेट अस एंज्वाय आवरसेल्वस। (बैठ जाता है)

सब—हियर, हियर ! हिप हिप हुर्रे ! लिबर्टी हॉल—बी फ्री—लेट अस एंज्वाय आवरसेल्वस।

नव—अरे बलाई, एक बार सबों को परोस दो न।

बलाई—बहुत अच्छा, यह लो। (सब शराब पीने लगते हैं)

नव—फिर, अब नाच शुरू हो जाय। कम, ओपन दी बॉल, माई ब्यूटीज !

[पयोधरी व नितम्बिनी—नाच व गाना आरम्भ करती हैं]

नव—क्या बात ! जीती रहो, जिन्दा रहो !

डा. दिल्ली स्वर्ण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
9004

काली—हुर्रे, ज्ञानतरंगिणी सभा फॉर एवर। (सब ताली बजाते हैं)

नव—चलो भाई, अब 'सपर' टेबुल पर जाया जाए।

चेतन—(खड़ा होकर) थ्री चीयर्स फॉर हमारा चेयरमैन।

सब—हिप हिप, हिप हिप, हुर्रे हुर्रे हुर्रे।

नव—पयोधरी, तुम मेरी 'आर्म' लो।

पयो.—तुम्हारी क्या लूँ ?

नव—मेरा हाथ पकड़ो।

काली—नितम्बिनी, तुम मुझे 'फेवर' करो। ओ हो, कैसा 'सॉफ्ट' हाथ !

सब—ब्रावो (ताली बजाते हैं)।

[यंत्रियों के सिवाय सबों का प्रस्थान]

तबला.—भाई, देखो तो वोतल में कुछ वचा है या नहीं।

बेहाला—देखूं, हाँ है। यह लो।

[दोनों पीने लगते हैं]

तबला.—ओ हो, माल तो अच्छा है।

[आड़ से हिप हिप हुर्रे की आवाज आती है]

बेहाला—चलो भाई, कहीं एक घूंट गांजा का प्रबंध करूं—इस ब्रांडी से हम लोगों को कुछ नहीं मिलता।

[सभी का प्रस्थान]

दूसरा दृश्य

नव वावू का सोने का कमरा

[प्रसन्नमयी, नृत्यकाली, कमला व हरकामिनी उपस्थित हैं]

प्रसन्न.—यह लो।

नृत्य.—कौन-सा खेला भाई?

प्रसन्न.—चिड़ीतन का दहला।

नृत्य.—अरी मूर्ख, चिड़ीतन क्यों खेला, चिड़ीतन तो रंग है, त्रुप को खेल दिया?

प्रसन्न.—तू बेकार क्यों डाँटती है? हाथ में रंग न हो तो पास देती जा।

नृत्य.—यह ले, मैंने इक्का मारा।

हर.—यह ले।

नृत्य.—यह क्या, उसने जो पास दे दिया।

हर.—हाथ में त्रुप के न रहने से पास नहीं दूं तो क्या करूँ?

नृत्य.—कमला बहन, अब तुम्हारी वारी है।

कमला—भाई, मैंने बीबी को खेला।

नृत्य.—भाड़ में जा तू, यह तो हम लोगों की जीत है, तूने बीबी क्यों दी?

कमला—वाह, बीबी न दूं तो क्या करूं ? साहब कहां है ?

नृत्य.—साहब मेरे हाथ में है।

कमला—मैं तो भाई कोई ज्योतिषी नहीं हूं।

नृत्य—तू चूल्हे में जा लड़की, इशारे को तू नहीं समझ पाती ? तेरे जैसी बेवकूफ लड़की दूसरी नहीं है। अगर तुझे ताश खेलना नहीं आता, तो खेलने क्यों आती है ?

कमला—क्यों, मैं क्या खेल नहीं सकती ?

नृत्य.—क्या इसे खेलना कहा जाता है ! तूने मेरे इक्के पर अपनी बीबी को डाल दिया !

कमला—अरी ! बीबी अगर पकड़ी जाती तो अच्छा होता क्या ?

हर.—क्यों नाहक झमेला कर रही है ?

नृत्य.—(कमला को) अच्छी मुसीबत ! जब साहब मेरे हाथ में है तो तुझे डरने की क्या बात है ?

कमला—रहने दे भी, तू क्या पागल हो गई है ? तेरे हाथ में जो साहब है, मैं कैसे जानूं ?

नृत्य.—देख, तुझे अगर मालूम होता कि ताश-खेल क्या है तो अन्दाजा लगा सकती।

कमला—अरी प्रसन्न, सुना तूने ! ऐसा कभी होता है, तू ही बोल ? अगर बीबी पकड़ी जाय तो बीबो के भागने की डोरी को कोई हाथ से निकलने दे।

[आड़ से 'अरी प्रसन्न' की आवाज]

प्रसन्न.—अरी, चुप हो जा भी, वह सुन, मां बुला रही है।

[आड़ से 'अरी बहू' की आवाज]

प्रसन्न.—(ऊंची आवाज से) क्या, माँ ?

(नेपथ्य से) अरी तुम लोग वहां क्या कर रही हो ?

प्रसन्न.—(ऊंची आवाज में) माँ, हम लोग भाई साहब का बिस्तरा बिछा रही हैं।

हर.—अरी ननद जी, ताश के पत्ते अब छिपाओ कहीं, ठकुराइन के देख लेने से भारी आफत होगी।

प्रसन्न.—(ताश के पत्ते तकिए के नीचे छिपाकर) आ जाओ भाई, हम सब मिलकर इस चद्दर की धूल झाड़ने लग जाएं, इससे मां कुछ नहीं मालूम कर सकेंगी।

नृत्य.—अरी, फिर वही इक्का !

कमला—अरी इससे क्या हुआ ! साहब क्या बीबी को नहीं पकड़ सकता ?

हर.—तुम लोगों की बाजी लगी, वह देख ठकुराइन ऊपर आ रही हैं। पकड़ो, सब मिलकर इस चद्दर को पकड़ो।

[गृहिणी का प्रवेश]

गृहि.—अरी, तुम लोग यहां क्या कर रही हो ?

प्रसन्न.—माँ, हम लोग भाई का बिस्तरा बिछा रही हैं।

गृहि.—सारी शाम एक बिस्तरा बिछाने में गंवा दी ! गंवाओगी क्यों नहीं। तुम सब तो कलियुग की लड़कियाँ हो।

नृत्य.—क्यों बड़ी चाचीजी, हम लोग कलियुग की लड़कियां क्यों ?

गृहि.—तुम तो सब की सब आलसी बन गई हो। किसमत से नव आज घर में नहीं है, वरना अब तक वह सोने के लिए आ जाता।

प्रसन्न.—मांजी, आज भइया कहां गए हैं ?

गृहि.—वहीं, राममोहन राय या और किसी की सभा में।

कमला—क्या भाई साहब आज फिर ज्ञानतरंगिणी सभा में गए हैं ?

हर.—(**प्रसन्न को सम्बोधित कर**) तो समझो, आज भी किस्सा बनेगा। ननद जी, तब आज तो तेरा बड़े आनन्द का दिन है। देख, आज भी तेरा भाई लौटकर तुझे ले उस दिन की तरह रंग-ढंग मचाता या नहीं।

गृहि.—प्रसन्न, बहू क्या कह रही है ?

(**नेपथ्य से**) ठकुराइन कहाँ हैं ? कर्ता बाबू बैठकखाने से अन्दर आ रहे हैं।

गृहि.—तब मैं चलूं, तुम लोग बिस्तरा बिछाकर जल्दी नीचे आ जाओ। (**प्रस्थान**)

हर.—(**हंसती हुई**) बहन जी ! बोल न, उस दिन तेरा क्या हुआ था ?

प्रसन्न.—छिः, मुझसे नहीं बोला जाएगा।

नृत्य.—क्यों री, क्या किया था उसने ? बोल न सही।

हर.—(**हंसकर**) बोलो न बहन जी !

प्रसन्न.—देख, तू अगर मुझे इस तरह तंग करेगी, तो मैं अभी यहाँ से चली…।

नृत्य.—बोल न, क्या हुआ था ? छोटी बहू, फिर तू ही कह डाल।

हर.—ठीक है, मैं ही कह देती हूं। उस दिन बाबू ने ज्ञानतरंगिणी सभा से लौटकर बहनजी को सामने खड़ा देखा और उसका मुंह चूम लिया। बहन भागना चाहती थी तो उन्होंने कहा—क्यों, इसमें क्या दोष है ? साहब लोग तो अपनी बहन का मुंह चूम लेते हैं, फिर हमारे चूम लेने से ही दोष होता है ?

प्रसन्न.—छिः छिः, बहू, तुम बहुत…।

नृत्य.—छिः अंग्रेजी पढ़ने से क्या आदमी इतना बेहूदा बन जाता है ?

हर.—और भी सुन, बाबू फिर क्या कहता है ?

प्रसन्न.—तेरा भाई शराब पीकर क्या करता है ?

हर.—बहन, वह न तो ज्ञानतरंगिणी सभा को जाता और न अपनी बहन का मुंह चूमता। खैर, बहन, तू अपने भाई को ही अपना ले न ? मैं मायके चली जाऊं, तेरा शौहर भी तो तुझे एक बार याद नहीं करता। तो फिर तू अपने भाई को ही अपना ले।

प्रसन्न.—तू भी अपने भाई को लेकर रह।

[नेपथ्य से 'छोड़ दो हग को' की आवाज]

(नेपथ्य से) तुम्हारी गोर लगता हूं, छोटेबाबू, इतना चिल्लाकर मत बोलो, कर्ताबाबू उस कमरे में खाना खा रहे हैं।

(नेपथ्य से) डैम योर कर्ताबाबू। मैं क्या किसी की परवाह करता हूं ?

कमला—वह सुनो, छोटे भाईसाहब आ रहे हैं।

नृत्य—आओ, हम लोग छिपकर थोड़ा तमाशा देखें।

हर.—(लम्बी सांस लेकर) नहीं भाई, मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। क्या बताऊं, सारी रात मुँह से प्याज और शराब की वदबू आती रहेगी, और ऐसे खर्राटे लेते हैं जो मुर्दा भी जिन्दा हो उठ बैठता है, छिः।

कमला—चल री, चल (दोनों छुप जाती हैं)।

[नव बाबू को लेकर बैद्यनाथ का प्रवेश]

नव—(मत्त भाव से) बोदे–माई गुड फेलो, तुझे मैं रिफार्म करना चाहता हूं। समझा ?

बोदे—जैसी मर्जी आपकी।

नव—बोदे, एक बीयर, नहीं, नहीं, बीयर नहीं, ब्रांडी ला।

वैद्य.—जो हुक्म सरकार। आप आराम से बिस्तरे पर बैठ जाइए ! मैं ब्रांडी लाए देता हूं। (स्वगत) बाबू यदि जल्दी न सो जाए तब एक भारी कांड मचेगा। मालिक यदि इन्हें इस हालत में देखें तो हड्डी-पसली एक कर देंगे।

नव—(बिस्तरे पर बैठता हुआ) लाओ–ब्रांडी लाओ–जल्दी लाओ।

वैद्य.—जी, अभी लाया। (प्रस्थान)

[प्रसन्न के साथ कर्ता का प्रवेश]

कर्ता—यह क्या ?

गृह—यह देखो, मेरा नव कैसा हो गया ! हाय राम, मेरा क्या होगा ?

कर्ता—(नव की तरफ देखकर, गुस्से के साथ) क्या सत्यानाश ! राधेकृष्ण ! अरे लफंगे, बेहूदे, कुलांगार !

गृहि—(गुस्से से) यह क्या ? बूढ़ा होने से क्या आदमी पागल हो जाता है ? तुम मेरे लाड़ले नव को इस तरह क्यों डांटते हो ?

कर्ता—(गुस्से से) लाड़ला नव ! जब उसका जन्म हुआ था, उसी समय उसे गला घोंटकर क्यों नहीं मार डाला था ।

नव—हियर, हियर ! हुर्रे !

गृहि.—हाय राम, यह क्या हो गया ? इस तरह अंटशंट क्यों बक रहा है ? मेरे बच्चे पर कहीं प्रेत का असर तो नहीं आन पड़ा है ?

कर्ता—तुम्हारा क्या जरा भी दिमाग नहीं है ? तुम क्या अन्दाजा नहीं लगा सकतीं कि तुम्हारा होनहार बेटा शराबी बन गया है ?

नव—हियर, हियर !

कर्ता—(गुस्से से) बेहया, चुप रह, क्या तुझे जरा भी शर्म नहीं ?

नव—डैम शर्म, शराब लाओ ।

कर्ता—क्या ? सुन लिया न !

गृहि.—ऊई मां, मेरी गोद के बच्चे को यह सब किसने सिखलाया है ?

कर्ता—कौन सिखलाएगा भाई ? यह कलकत्ता महापाप का नगर है, कली की राजधानी है। यहां क्या किसी संभ्रान्त जन को बसना चाहिए ।

गृहि.—यह सब मुझे कैसे मालूम हो ?

कर्ता—कल सबेरे ही मैं तुम सबों को लेकर श्री वृन्दावन रवाना होऊंगा। इस नालायक को यहाँ छोड़कर जाना उचित नहीं होगा। चलो, अब हम चलें। इस बन्दर को यहीं कुछ देर तक सोने दो।

नव—हियर, हियर ! आई सेकण्ड दी रेजोल्यूशन !

कर्ता—हाय, हमारे वंश में भी ऐसा कुलांगार पैदा होना था !

गृहि.—अरी प्रसन्न, कमला, तुम लोग जरा इधर आ जाओ।

[**कर्ता व गृहिणी का प्रस्थान, प्रसन्नादि का प्रवेश**]

हर.—(आगे बढ़कर) ननदजी, तुम्हारे भाई की हालत देखो। हाय, इस कलकत्ता में ऐसी कितनी अभागिन स्त्रियाँ मेरी तरह कष्ट भोग रही हैं, उसका क्या पता। हे भगवन् ! तुम हम लोगों पर इतने नाराज हो गए क्यों ?

प्रसन्न.—तो क्या आज यह तमाशा पहले-पहल देखा है ? ज्ञानतरंगिणी सभा में तो इस तरह का ज्ञान ही प्राप्त होता है।

हर.—और नहीं तो क्या ? आजकल कलकत्ता में जो पढ़ने-लिखने आते हैं; उनमें से बहुतों को ऐसा ज्ञान प्राप्त होता है। बहन, जरा सोचो, ऐसे शौहर का रहना, न रहना, उससे कुछ आता-जाता नहीं। ननदजी, तुमसे क्या बताऊं, ये सब देखकर जी चाहता है कि गले में रस्सी डाल आत्महत्या कर

लूं। (लम्बी सांस भरती है) छिः छिः छिः ! (सोचकर) ये बेहया फिर कहते हैं कि हम लोग साहबों की भाँति सभ्य बने हैं। जरा सोचो तो सही—शराब पीकर, मांस खाकर दिल्लगी करने से क्या सभ्य बनते हैं ? इसे ही क्या सभ्यता कहते हैं ?

● ●

बुढ़ापे की जवानी

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

भक्तप्रसाद : एक बूढ़ा लम्पट जमींदार
रामू : भक्तप्रसाद का नौकर
गदाधर : भक्त का एक सेवक
वाचस्पति : भक्त का एक आसामी ब्राह्मण
हानिफ गाजी : भक्त का एक मुसलमान आसामी

स्त्री-पात्र

पूंटी : गदाधर की बुआ, दूती
फतीमा : हानिफ की बीवी
भगी : गांव के तेली की औरत
पांची : भगी की बेटी

पहला अंक

पहला दृश्य

पोखर के किनारे, बादामतल्ला

[गदाधर व हानिफ गाजी का प्रवेश]

हानि.—(लम्बी सांस छोड़कर) इस बार पीर की दर्गाह में कितनी बार 'सिन्नी' चढ़ाई है, क्या बताऊं। मगर किसी तरह कुछ नहीं बना। अभी तक दस बोरे धान तक भी जमा नहीं कर सका। खुदाताल्ला की मर्जी।

गदा—पानी न बरसने से क्या कभी धान मिलता है रे ? फिर देख, मालिक इस मामले में क्या करते हैं ?

हानि.—क्या करेंगे, वह क्या लगान में रिहाई देंगे ?

गदा—तो तू फिर क्या करेगा ?

हानि.—सिर पटकूंगा। अब तो मरने से ही राहत मिल सकती है। इस बार अगर हल और दोनों बैल खो डालूं तो मैं मारा जाऊंगा। या अल्लाह ! आखिर बाप-दादों का यह पिंड भी क्या छोड़ना पड़ेगा।

गबा—वह देख, मालिक इधर ही आ रहे हैं। तेरी तरफ-दारी में मैं थोड़ी-बहुत सिफारिश जरूर करूंगा। देखें, क्या बनता है ?

[भक्त बाबू का प्रवेश]

हानि.—मालिक, मेरा सलाम लीजिए।

भक्त—(पेड़ की जड़ के पास बैठते हुए) अरे हानफे, तू तो बड़ा शैतान है। यह बता, तू लगान क्यों नहीं देता ? (माला जपते हैं)

हानि.—सरकार, इस बार के अनाज के हाल से आप पूरे वाकिफ हैं।

भक्त—तुम लोगों की अनाज की पैदावार हो या न हो, इस से मेरा क्या आता-जाता है।

हानि.—जी, आप मालिक हैं।

भक्त—अरे, मालिक के बच्चे ! कम्पनी की सरकार क्या तेरे मालिक को छोड़ेगी ! अच्छा, अब बता, तू लगान देगा या नहीं ?

हानि.—मालिक, बन्दा ने तो बहुत रियायत की है, अब आप अगर मेहर न करें तो मैं कहां जाऊं। अब मैं कुल ये बारह गंडे पैसे के सिवाय और कुछ नहीं दे सकूंगा।

भक्त—तू तो बड़ा बदमाश है रे ! तुझ से ग्यारह चवन्नियाँ मिलनी हैं और तू सिर्फ तीन चवन्नियाँ देना चाहता है ! ग ·दा !

गदा—जी मालिक !

भक्त—इस पाजी हरामजादे को पकड़ जमादार के जिम्मे कर आ तो ।

गदा—जी सरकार, बहुत अच्छा (**हानिफ को**) चल बे ।

हानि.—हुजूर, मैं बहुत ही गरीब किसान हूं । आप ही की दया से मैं जिन्दा रहा हूं, अब और कहां जाऊं !

भक्त—(**गदा को**) जा, इसको ले जा । खड़ा-खड़ा मुंह ताकता है, क्यों ?

गदा—अरे, सुनता नहीं, चल बे ।

हानि.—दुहाई मालिक की, दुहाई जमींदार की ! (**गदा को आहिस्ता-आहिस्ता**) भाई, मेरे लिए तू दो-चार बातें मालिक से अर्ज कर न ।

गदा—अच्छा, ठीक है । फिर तू जरा आड़ में चला जा (**भक्त को धीरे से**)—मालिक !

भक्त—क्या है रे ?

गदा—इस बार के लिए हानिफ को माफ कर दीजिए ।

भक्त—क्यों रे ?

गदा—जो, उस बेहूदे ने अब की बार जिस लड़की से शादी की है उसे क्या आपने देखा है ?

भक्त—एं, गदा !

गदा—जी, जी !

भक्त—उस छोकरी को हासिल करा सकेगा ?

गदा—जी, यह कौन-सी बड़ी बात है ? यदि मालिक बीस तक रुपये खर्च करें !

भक्त—बी···स रुपये, क्या बोल रहा है ?

गदा—जी, इससे कम नहीं होगा, वरन् कुछ रुपये और ज्यादा भी लग सकते हैं, बात रही कि जो भी हो, यह कम उम्र वाली बहू है तो !

भक्त—अच्छा ठीक है, जब मैं बैठकखाने में जाऊंगा, आकर पैसा लेते जाना।

गदा—जी मालिक, बहुत अच्छा !

भक्त—(आड़ की तरफ देखते हुए) वह कौन है ? वाचपोत न ?

[वाचस्पति का प्रवेश]

कौन है वह ? अरे बाचपोत भइया ! नमस्कार ! यह क्या है ?

वाच.—दुःख की कथा क्या बताएं, माताजी मुझे छोड़कर चली गईं ! (रोता है)

भक्त—क्या बोल रहे हो ? तो यह घटना कब हुई ?

वाच.—आज चौथा दिन है।

भक्त—क्या हुआ था ?

वाच.—वैसा खास कुछ नहीं, बुढ़ापे का शरीर था !

भक्त—भाई, यह सब भगवान की लीला है, हमारे वश की नहीं, इस पर सोचना बेकार है।

वाच.—सो तो मैं मानता हूं। फिर भी जिससे इस जिम्मेदारी से बरी हो सकूं वह आपको करना पड़ेगा।

आपको तो मालूम है कि जो कुछ जमीन थी, वह आपके बाग के साथ हड़प ली गई।

भक्त—अरे, जो हो गया सो हो गया, उसका फिर जिक्र करके क्या फायदा?

वाच.—सो तो ठीक है, जो चली गई सो चली गई, 'गतस्य शोच नास्ति'। वह तो यों भी नहीं रही, किसी सूरत से नहीं रहेगी। पर आप पर काफी भरोसा रखता हूं ताकि इस जिम्मेदारी से नजात पा सकूं और इसके लिए आपको जरूर कुछ करना पड़ेगा।

भक्त—भाई, अब मेरा बहुत ही बुरा वक्त है, थोड़े दिनों में मुझे बीस हजार रुपये लगान के रूप में दाखिल कराना है।

वाच.—आपका यह शाही राज है। लक्ष्मी की कृपा से आप को किसी चीज की कमी नहीं है। आप यदि थोड़ी-सी निगाह डालें तो हम जैसे हजारों आदमी कितनी जिम्मेदारियों से मुक्त हो सकते हैं।

भक्त—लेकिन वाचपोत भइया, इस समय मैं तुम्हारा जरा भी उपकार कर सकूं ऐसा तो नहीं दीखता। तुम भई, दूसरे कहीं कोशिश करो। देखूंगा, थोड़े दिन बाद मैं कुछ कर सकता हूं या नहीं।

वाच.—हुजूर, आप मालिक हैं, राजा हैं, इससे ज्यादा आप से और कुछ नहीं बता सकता, फिर आपको जैसी सूझे वैसा कीजिएगा। (लम्बी सांस लेता है) तो, अब फिर मुझे इजाजत दें।

भक्त—जाओ, भाई, नमस्कार।

[वाचस्पति का प्रस्थान]

मालूम होता है, यह कम्बख्त मुझे डुबो देगा। हमेशा 'दो' 'दो' का नारा लगाए रखता है। इसके सिवाय इसे और कुछ नहीं जचता। अरे गदा!

गदा—जी, मालिक!

भक्त—छोकरी देखने में अच्छी तो है रे?

गदा—मालिक, आपको उस लड़की की याद है क्या?

भक्त—कौन-सी लड़की?

गदा—जी, वही भट्टाचार्य की लड़की। आप जिसे··· (धीमे स्वर में), और बाद में जो घर से निकल कस्बे में रहने लगी थी।

भक्त—हां, हां, याद है। छोकरी देखने में सुन्दर थी, (लम्बी सांस लेकर) राधेकृष्ण! प्रभो, तुम ही सत्य हो। तो उस क़िस्से से इस मामले का क्या ताल्लुक है रे!

गदा—जी, आजकल वह बाजारू बन गई है। हानफे की जोरू उससे भी अच्छी सूरतवाली है।

भक्त—अच्छा, ऐसी बात! तो आज रात को ठीक कर सकेगा?

गदा—जी, आज अगर न कर सकूं तो कल या परसों जरूर कर डालूंगा।

भक्त—देख, रुपये की फिक्र मत कर। जितना खर्च लगे मैं दूंगा।

गदा—जो हुक्म! (मन-ही-मन) हुजूर, इस तरह हवस के शिकार जितनी बार बने उतना ही फायदा हम

लोगों का है। गौ के मरने से ही मोची का त्योहार मनता है !

भक्त—(आड़ की तरफ देखते हुए) वहां कौन है रे ?

गदा—जी, वही भगी और उसकी बेटी पांची। पानी भरने जा रही हैं।

भक्त—कौन भगी रे ?

गदा—जी, पीताम्बर तेली की जोरू।

भक्त—अच्छा, तो वही छोकरी है पीताम्बर की बेटी पांची ! यह तो कीचड़ में कमल का खिलना !

गदा—जी, आज दो दिन हुए ससुराल से आई है।

भक्त—(मन-ही-मन) 'नितम्ब देख पृथ्वी मिट्टी बन जाती, आज तक भी रह-रह वह कांप उठती।' आहा, 'कुचों की ऊँचाई मेरु की चोटी जैसी, दाड़िम भेद··· कमलिनी मानो सिहर रही।'

गदा—(मन-ही-मन) मालूम होता है, मालिक स्वप्न जगत् में विचर रहे हैं। उम्र के ढल जाने से लोभ बढ़ जाता है, कोई अच्छी चीज सामने देखने से उसे पाने के लिए बेतहाशा तड़पता है।

भक्त—अरे गदा !

गदा—जी मालिक !

भक्त—इस मामले में तू कुछ कर सकता है ?

गदा—जी, यह काम आसान नहीं है। सुना है, किसी बड़े खानदान में उसकी शादी हुई है।

[गागरी लिए भगी व पांची का प्रवेश]

भक्त—अरी बड़ी बहू, यह लड़की कौन है री ?

भगी—क्या कह रहे हैं, मालिक ? आप मेरी पांची को नहीं पहचान सके ?

भक्त—अरे, यह तुम्हारी वह पांची है ! बड़ी अच्छी लड़की है, जीती रहे तुम्हारी बेटी। तो इसकी शादी कहाँ की है ?

भगी—जी, थानाकुल, कृष्णनगर के पाल के घर।

भक्त—अच्छा, वे तो बड़े आदमी हैं। दामाद कैसा है ?

भगी—(गर्व के साथ) जी, देखने के लायक है। कलकत्ता में रहकर पढ़ता है। सुना है, बड़े लाट साहब उसे बहुत प्यार करते हैं, हर साल एक किताब उसे दिया करते हैं।

भक्त—तो दामाद कलकत्ता में ही रहता है !

भगी—जी हां। इस बार कितने कष्ट उठाकर बेटी को घर में ला सकी, सो क्या बताऊं। बड़े घर में ब्याह करने से यही हाल होता है।

भक्त—हाँ, यह तुमने सच ही कहा है। (मन-ही-मन) छोकरी तो जवानी से डगमगा रही है, फिर शौहर विदेश में है ! इस पर भी अगर कुछ न कर सकूँ तो क्या करूंगा ! (प्रगट रूप से) अरी पांची, जरा नजदीक तो आ, एक बार तुझे अच्छी तरह देखूं। कब की बात है, जब छोटी थी तो तुझे देखा था, अब कितनी स्यानी हो गई है !

भगी—जा न बेटी, डर काहे का ? मालिक को प्रणाम कर, मालिक तेरे ताऊजी लगते हैं री !

पांची—(आगे बढ़कर प्रणाम करती है, फिर मन-ही-मन) आई

मां, यह बुड्ढा तो बदतमीज है, मुझे हड़प लेना चाहता है क्या ? छिः छिः, यह कैसा आदमी है ! यह तो केवल मेरी छाती की तरफ एकटक देख रहा है। कैसा बेशर्म मर्द है !

भक्त—(मन-ही-मन) 'दाड़िम भेद कर कदम्ब जो सिहर रहा', ओ हो—

भगी—आप कुछ बोल रहे हैं, मालिक ?

भक्त—नहीं, खास कुछ नहीं। तो तुम्हारी बेटी यहां कितने दिन रहेगी ?

भगी—यही एक महीने तक रहने का इरादा है।

भक्त—(मन-ही-मन) बस, बस, उससे ही काम बनेगा। अर्जुन ने अठारह दिनों में ग्यारह अक्षौहिणी सेना को युद्ध-क्षेत्र में मार डाला था और मैं क्या एक महीने में तेली की एक लड़की को काबू में न ला सकूंगा ! (प्रगट रूप से) कृष्ण, सब तुम्हारी इच्छा है !

भगी—मालिक ! आप क्या कह रहे हैं ?

भक्त—पूछ रहा हूं, पीताम्बर भाई कहाँ है ?

भगी—वह तो नमक खरीदने केशवपुर हाट में गया है।

भक्त—कब लौटेगा ?

भगी—जी, चार-पांच दिन में लौट आएंगे। मालिक, तो फिर अब पानी भरने जाएं ?

भक्त—हाँ, जाओ बहू !

भगी—अरी पांची, बेटी, चल।

[भगी व पांची का प्रस्थान]

भक्त—(मन-ही-मन) पीताम्बर के लौटने के पहले ही यह

काम करना पड़ेगा। (बाहर की तरफ देखते हुए) आहा! छोकरी कितनी हसीन है! कवि लोग जवान स्त्रियों को जो मरालगामिनी के नाम से पुकारते हैं, इस कथन में वाकई सच्चाई है। (प्रगट रूप से) अरे गदा—

गदा—जी हुजूर! (मन-ही-मन) यह लो, फिर बला आई!

भक्त—नगीज तो आ। देख, इस मामले में कुछ कर सकता है?

गदा—मालिक! यह काम मेरे वश में नहीं। हां, मेरी बुआ कर सकती है या नहीं, सो मैं नहीं कह सकता।

भक्त—तो फिर जा, दौड़ कर अपनी बुआ से इस बात का जिक्र करके आ। हाँ देख, इस काम में जितने रुपये लगें, मैं दूंगा।

गदा—जी, तो फिर मैं जाऊं। (जाते-जाते) हुजूर, आज तो कल्पतरु का त्योहार है, देखूं गदा के भाग्य में क्या लिखा है?

[प्रस्थान]

भक्त—(मन ही-मन) प्रभो! तुम्हारी मर्जी! आहा, सचमुच, छोकरी का अनोखा रूप है, कुछ चुलबुल भी है। देखूं, कहां का पानी कहां जा ठहरता है।

[नौकर का, लोटा और अंगोछा लेकर प्रवेश]

अब चला जाए, सन्ध्या का समय हो गया है। (खड़े होकर) दीनबन्धु, तुम जैसा चाहो। ओहो, इस छोकरी को यदि काबू में ला सकूं!

[दोनों का प्रस्थान]

द्वितीय दृश्य

हानिफ गाजी के मकान के सामने

[हानिफ व फतीमा का प्रवेश]

हानि.—क्या कहती है ! सिर्फ पचास रुपये !

फती—मैं क्या झूठ बोल रही हूं !

हानि.—ऐसा हरामजादा हिन्दुओं में दूसरा नहीं मिलेगा। साला असामियों की जान पर खेल जाता है। उन लोगों का सब कुछ लूट लेता है; फिर ऐसे बुरे काम करने पर भी उतारू होते हैं ! कम-से-कम इस बात का अन्दाजा कर कि कम्पनी के जमाने में इन्साफ है या नहीं। इस साले काफिर को मैं मांस खिलाकर ही रहूंगा। इस साले की इतनी हिम्मत कैसे हुई ! हम गरीब हैं तो क्या हुआ ? मेरे बाप-दादों ने भी तो नवाब की सरकारी नौकरी की है और मेरी बहन ने तो घर से निकलकर कोई बौना काम नहीं किया। साला कहीं का !

फती—अरे, तुम नाहक गुस्सा कर रहे हो। वह देखो जिस शैतान औरत को मेरे पास भेजा था, वह फिर इस तरफ आ रही है।

हानि.—हरामजादी के सिर को पटक सकता तो कलेजा ठंडा होता।

फती—चलो, हम थोड़े आड़ में छिप जाएं, देखें, साली क्या करती है !

[दोनों का प्रस्थान]

[पूंटी का प्रवेश]

पूंटी—(**चारों तरफ देखकर मन-ही-मन**) थू:, थू: ! इन मुसलमानों के घर आने से ही उल्टी आने लगती है। कद्दू का साग, प्याज का छिलका ! थू: थू: ! लेकिन करूं क्या ? भक्त बाबू कब ऐसे काम से हाथ खींचें, कौन जाने ? बूढ़ा हो गया है, फिर भी अब तक लार टपका रहा है। करीब तीस साल से उनका ऐसा काम कर रही हूं। इतने अरसे तक न-जाने कितनी बहू-बेटियों, कितनी बेवाओं, कितनी कुमारियों की इज्जत लुटवाई है, इसका क्या पता ! (**मुस्कराकर**) इधर बाबू परम वैष्णव के वेश में माला जपते फिरते हैं—हर सोमवार को शाकाहार करते हैं—जैसे कोई निष्ठावान पुरुष हैं ! (**कुछ सोचकर**) सो जाने दो, अब इस औरत को कब्जे में ला सकूंगी या नहीं ! पीताम्बर तेली की बेटी से ऐसी बात छेड़ने में डर-सा लगता है। वह तो किसी दु:खी कंगाल की बहू नहीं है कि दो-चार पैसों के लालच में पड़ जाएगी। फिर भक्त बाबू की अगर जवानी रहती तो देखा जाता। छोकरी अगर नाराज होकर गुस्से में आ जाती तो दिल्लगी से उस बात को टाल देती। देखूं, यहाँ क्या बनता है ?

(ऊंची आवाज देकर) अरी फती ! तू घर में है क्या ?
(नेपथ्य से) कौन है ?

पूंटी—अरी, मैं हूं, एक बार बाहर आ तो !

[फतीमा का प्रवेश]

फती—अरे, पूंटी दीदी, कहो क्या हाल है ?

पूंटी—हानिफ़ कहाँ है ?

फती—वह तो खेत जोतने गए हैं।

पूंटी—(मन-ही-मन) अच्छा ही हुआ। मर्द मानो साक्षात यमदूत है। (प्रगट रूप में) अरी फती, अब तूने क्या ठानी है ?

फती—किस बारे में बहिन !

पूंटी—वही, जो बात मैंने छेड़ी थी। मान जा मेरी बात। सोने पर खाएगी, सोना पहनेगी। सोच, यह बेहतर है या यहां बांदी बने बैठी रहना।

फती—बहन, जिसके नसीब में जो लिखा है वही होगा। तुम मुझे जवान सनम को छोड़ एक बूढ़े के पास जाने को कहती हो, यह तो बताओ, उस बूढ़े के मर जाने से मेरा क्या होगा ?

पूंटी—अरी, सो तो भाग्य की बात हैं, ये सब फिक्र करने से कैसे काम चलेगा ? यह देख, पच्चीस रुपये लिए आई हूं। यदि यह काम करती हो तो बोल, रुपये तुझे दे देती हूं, और यदि न करती हो तो वह भी बता दे, मैं चली !

फती—जरा ठहर जाओ न, थोड़ा-सा सब्र करो, बहन !

पूंटी—सुन, अगर तूने मेरी बात मान ली तो देर करने से

फायदा नहीं।

फती—ठीक है, बहन, रुपये दो, मैं राजी हूं।

पूंटी—देख फिर, आखिर में कहीं गड़बड़ी न हो!

फती—डरती क्यों हो? मैं शाम को तुम्हारे वहां पहुंच जाऊंगी। लाओ, रुपये दे डालो! हां बहन, इस बात का किसी को पता तो नहीं होगा?

पूंटी—अरे राम, राम! यह भी कभी हो सकता है! पर यह बात मालूम हो जाने से हम लोगों की जितनी शर्म होगी, उतनी तेरी भी नहीं होगी। हम लोग हिन्दू हैं और तू तो मुसलमान। तेरे तो कुल-वंश की कोई बात नहीं, तुम लोग बेवा हो जाने से फिर से शादी कर लेती हो।

फती—(**मुस्कराकर**) हम लोग तो बेवा होने से शादी कर लेती हैं, मगर तुम लोग क्या करती हो, री! खैर, सो बात मैं नहीं छेड़ती! लाओ, अब पैसे दो!

पूंटी—यह ले।

फती—(**रुपये गिन कर**) ये तो बहन पाँच गंडे से एक रुपया कम है!

पूंटी—देख, वे छः रुपये मेरी दलाली है।

फती—नहीं बहन, सो नहीं होगा, तुम दो रुपये लो।

पूंटी—नहीं बहन, मुझे कम-से-कम चार रुपये चाहिएं।

फती—ठीक है, तो दो रुपये वापस दो!

पूंटी—यह ले। हां देख, शाम के वक्त उस आमबाग में आ जाना, फिर मैं आकर तुझे ले जाऊंगी।

फती—अच्छा,ठीक है, अब तुम भागो यहां से।

पूंटी—देखना बहन, याद रखना, यह किसी ऐरे-गंरे आदमी का रुपया नहीं, इस रुपये का हराम करना तेरे-मेरे बूते के बाहर है। अच्छा, तो अब मैं चली।

[प्रस्थान]

[हानिफ का फिर से प्रवेश]

हानि.—(आड़ की तरफ देखकर रोष के साथ) हरामजादी का सिर पटक देता तो मेरा कलेजा ठंडा होता। या अल्लाह! यह काफिर साला क्या मुसलमानों की इज्जत मिट्टी में मिलाना चाहता है! देख फती, मैं तेरे लिए सब कुछ कर सकता हूं, याद रखना, और तू संभलकर चलना। साला काफिर है, तेरे बदन पर हाथ-वाथ न लगाए।

फती—इसलिए तुम कुछ भी फिक्र मत करो। वह देखो, इधर ही कोई आ रहा है। मैं चली।

[वाचस्पति का प्रवेश]

वाच.—(मन-ही-मन) बहुत-सी लकड़ी चाहिए। अच्छा, तो इस पुराने इमली के पेड़ को ही क्यों न काटा जाए। ओ हो, बचपन में इसी के नीचे कितना खेला-कूदा, उसे याद कर अब भी मन चंचल हो उठता है। (लम्बी साँस छोड़कर) भाड़ में जाए, अब यह सब सोचकर क्या फायदा? (जोर से पुकारता है) हानिफ, अरे हानिफ गाजी।

हानि.—जी आया, क्या बोल रहे हो ठाकुर!

वाच.—देख, इमली का एक पेड़ काटना पड़ेगा, तू काट सकेगा क्या ?

हानि.—क्यों नहीं ?

वाच.—तो फिर अपनी कुल्हाड़ी लेता आ और मेरे साथ चल।

हानि.—ठाकुर, इस काम के लिए मालिक ने तुम्हें कितने दिए हैं ?

वाच.—अरे, यह बात तू क्यों पूछता है ? करीब बीस बीघों की देवत्य जमीन थी, उसे उन्होंने छीन लिया है। इस संकट के समय उनसे बताया तो उन्होंने कहा कि अब मेरा समय अच्छा नहीं है, मैं कुछ नहीं दे सकूंगा। फिर बहुत देर तक कहने-सुनने के बाद सिर्फ पाँच ही रुपये निकाल सका। (लम्बी साँस लेता है) सब भाग्य की बात है रे !

हानि.—(सोचकर) ठाकुर, एक मर्तबा इधर आओ तो, तुम से कुछ बातें करनी हैं।

वाच.—कैसी बातें, यहीं पर बोल डाल न !

हानि.—नहीं, एक बार उस तरफ जाना पड़ेगा।

वाच.—ठीक है, चल।

[दोनों का प्रस्थान]

[फतीमा व पूंटी फिर आती हैं।]

पूंटी—सुन, उस आमवाग में नहीं हुआ।

फती—तो मुझे कहाँ ले जाना चाहती हो ?

पूंटी—देख, पोखर के किनारे जो टटा शिव मन्दिर है, वहीं

पर तुझे जाना पड़ेगा। हाँ सुन, रात को ठीक चार बजे उस पेड़ के नीचे खड़ी रहना, फिर मैं आकर जो कुछ करना है करूंगी !

फती—ठीक है, अब तुम यहाँ से चली जाओ, देखना कहीं किसी को पता न लग जाए !

पूंटी—अरी, तू कामत या ब्राह्मण की लड़की है क्या, जो तुझे इतना डर लग रहा है ?

फती—मैं जो हूं सो हूं, लेकिन यदि शौहर को किसी सूरत से यह मालूम हो गया तो वह हम दोनों का गला घोंटकर ही मार डालेगा।

पूंटी—(डर के साथ) हाँ, सो तो तूने ठीक ही कहा है। उः, वह तो आदमी नहीं, साक्षात यमदूत है। अच्छा, तो फिर मैं चली। (प्रस्थान)

फती—(मन-ही-मन) देखें, आज रात को क्या तमाशा खेला जाए ! अब जाऊं, खाना पकाना है। (प्रस्थान)

[वाचस्पति व हानिफ का प्रवेश]

वाच.—शिव ! शिव ! इस उम्र में भी यह सब ! वह भी यवनी से ! राम, राम ! कलिदेव अब सचमुच ही इतने दिनों में भारतभूमि पर आविर्भूत हुए हैं। हानिफ, देख, तुझसे जो कुछ कहा, याद रखना। हाँ, बहुत होशियार रहना। इसमें मालूम होता है, हम दोनों का ही फायदा होगा।

हानि.—माशा अल्लाह ! इसके लिए तुम बेफिक्र रहो।

वाच.—अब चल। तेरी कुल्हाड़ी कहां है ?

हानि.—कुल्हाड़ी शायद खेत में पड़ी हुई है। चलो !

[दोनों का प्रस्थान]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

[भक्त प्रसाद बाबू का बैठकखाना, भक्त बाबू बैठे हैं]

भक्त—(मन-ही-मन) आह ! आज क्या दिन का शेष नहीं होगा ? (अंगड़ाई लेते हुए) दीनबन्धो ! सब तुम्हारी इच्छा है। पूंटो बोलती थी कि पांची का मिलना मुश्किल है। कैसी खेद की बात है, एक स्वर्णकमल को हासिल न कर सका ! सारी पृथ्वी को जीतकर पार्थ को आखिर प्रमिला के हाथ शिकस्त खानी पड़ी। खैर, अभी जो हानफे की जोरू को मिला, यह भी खुशी की बात है। छोकरी देखने में खराब नहीं है, और उम्र भी कम है। ज़वानी के मारे

कभी छलकाती भी है। शास्त्र में कहा गया है कि जवानी में कुतिया भी सुन्दर दीखती है। (चारों तरफ देखकर) अब भी कम-से-कम दिन के दो-तीन पहर बाकी हैं। क्या मुसीबत! अब भी इन्तजार करना है!

[आनन्द बाबू का प्रवेश]

कौन? आनन्द हो क्या? अरे आओ, आओ। घर कब आए?

आन.—(प्रणाम करता है, फिर बैठ जाता है) जी, कल रात को ही आ पहुंचा हूं।

भक्त—फिर बताओ, क्या हाल है?

आन.—जी, सब ठीक है। बहुत दिन से घर नहीं आया था, इसलिए महीने तक छुट्टी लेकर आया हूं।

भक्त—अच्छा ही किया। क्या अम्बिका से मिला था?

आन.—जी, अम्बिका के साथ तो रोज ही कलकत्ते में मेरी भेंट होती है।

भक्त—सो कैसे? तुम तो पाथुरियाघाट में रहते हो न?

आन.—जी, पहले रहता था। अब तो खिदिरपुर में चला आया हूं।

भक्त—अम्बिका की पढ़ाई-लिखाई कैसी चल रही है?

आन.—ताऊजी, ऐसा क्लेवर लड़का तो हिन्दू कालेज में दूसरा नहीं है।

भक्त—क्या कहा तुमने, ऐसा क्या लड़का?

आन.—जी, क्लेवर यानी चतुर व मेधावी!

भक्त—हां, वह तो तुम लोगों का अंग्रेजी लफ्ज है। देखो, ये सब शब्द हमारे कानों में अच्छे नहीं लगते। जहीन या चालाक बोलने से हम फौरन समझ लेते हैं। अच्छा आनन्द, तुम तो बड़े शिष्ट लड़के हो, यह बताओ कि अम्बिका अधर्म-आचरण तो नहीं कर रहा है ?

आन.—ताऊजी, यह अधर्म-आचरण क्या है ?

भक्त—यही देव-ब्राह्मणों की अवहेलना, गंगास्नान के प्रति घृणा, माने यही सब जो ईसाई लोग करते हैं।

आन.—जी, इस बारे में मैं बारीकी से कुछ नहीं कह सकता।

भक्त—मैं जानता हूं कि अम्बिका प्रसाद कभी ऐसा कुकर्म-आचारी नहीं होगा। वह तो मेरी औलाद है न ! प्रभो, तुम्हीं सत्य हो। अच्छा, मैंने सुना है कि कलकत्ता में सब बराबर होते जा रहे हैं। क्या यह सच है ? सुनते हैं, वहां कायस्थ, ब्राह्मण, कैवत, कलू सब एक साथ रहते-बसते हैं, खाते-पीते हैं। बताओ, ये सब सच है ?

आन.—जी, यह सब झूठ है, यह भी नहीं कह सकता !

भक्त—क्या सत्यानाश ! हिन्दुओं की मर्यादा किसी सूरत से नहीं वच सकतो। और बचेगी भी कैसे ? कलि का राग दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है, घटता तो नहीं। (लम्बी सांस छोड़कर) राधेकृष्ण !

[गदाधर का प्रवेश]

कौन है रे ?

गदा—जी मैं, गदा हूं (**बगल में खड़ा हो जाता है**)।

भक्त—(**इशारा करते हैं**) ?

गदा—वही, वही बात !

भक्त—(**मन-ही-मन**) भला आज क्या शाम नहीं होगी ! (**प्रगट रूप से**) बहुत अच्छा ! आनन्द ! हाँ, यह भी सुनते हैं, कलकत्ते में बड़े-बड़े हिन्दू लोग मुसलमान खानसामा रखते हैं।

आन.—जी, मैंने भी सुना है, कोई-कोई रखता है।

भक्त—छिः, छिः ! क्या कहते हो ? हिन्दू होकर मुसलमान के हाथ का खाता है ! राम, राम !

गदा—(**मन-ही-मन**) मुसलमानों के हाथ भात खाने से जात खो जाती है, मगर उनकी लड़कियों को लेकर मजा लूटने से कोई खोट नहीं होता ! वाह, वाह ! मालिक की कैसी भावना है !

भक्त—मालूम होता है, अम्बिका को और ज्यादा दिन तक कलकत्ते में नहीं रखा जा सकता।

आन.—लेकिन ताऊजी, इस समय अम्बिका को कालेज से छुड़ा लेना किसी सूरत से ठीक नहीं होगा।

भक्त—क्यों ? इसके बाद क्या अंग्रेजी सीखकर अपने वंश की नाक कटवाएगा ! फिर मृत गौ क्या घास चरती है ? अपने बाप-दादों का श्राद्ध कौन करेगा ?

[**आड़ से शंख, घण्टा, मृदंग, करताल आदि की आवाजें**]

भक्त—चलो भाई, देवता के दर्शन किए जाएं !

आन.—जी, चलिए।

[दोनों का प्रस्थान]

गदा – (मन-ही-मन) अब बाबू लोग तो गए। (चारों तरफ ताककर) अब थोड़ा आराम किया जाए। (तकिए पर बैठ जाता है) वाह, कैसा नर्म बिस्तर है! इस पर बैठने से ही कैसे नींद-सी आ जाती है। (ऊंची आवाज से) अरे, रामू!

(नेपथ्य से) कौन बुलाता है?

गदा – मैं, गदाधर। अरे रामू, एक घूंट अम्बूरी तम्बाखू नहीं पिला सकता?

(नेपथ्य से) ठहरो, पिलाता हूं।

गदा—(तकिए पर आधा लेटकर, मन-ही-मन) सचमुच, कैसी आराम की चीज है! ये बाबू लोग ही जिन्दगी के मजे लूटते हैं। वे भात के साथ कटोरे-कटोरे घी खाते हैं और दूध पीते हैं, और ऐसे तकियों पर लेटने का आराम लेते हैं, उन जैसा सुखी और कौन हो सकता है?

[तम्बाखू लिए रामू का प्रवेश]

रामू – यह क्या है? तू यहां क्यों बैठा है?

गदा – भाई, एक मर्तबा बाबू बनकर जन्म सार्थक कर लूं। दे, जरा हुक्का तो दे। मालिक के फरसिट पर लाता तो और भी मजा आता। (हुक्का लेता है)

रामू – हा, हा, हा! बाबू लोगों की तरह तम्बाखू पीना तूने कहाँ से सीख लिया? बिल्ली भागी तो चूहे का कूदना! हा, हा, हा!

गदा—हा, हा, हा। भइया, तू एक बार मेरा बदन दबा दे तो !

रामू—अरे साले ! मैं क्या तेरा नौकर हूं ? हा, हा, हा !

गदा—तेरे गोर लगा, आ जा न एक बार। अच्छा, एक बार तू मेरा बदन दबा दे, मैं फिर तेरा बदन दबा दूंगा।

रामू—हा, हा, हा ! ठीक है, तो ले।

गदा—ठहर जा, पहले हुक्का रख दूं। आ, अब आ।

[रामू बदन दबाता है।]

गदा—हा, हा ! अरे, इस तरह क्या बदन दबाया जाता है ?

रामू—अब बोल। आराम लग रहा है न ? हा, हा !

गदा—भाई, आज हमने कैसा मजा लूटा ! हा, हा !

रामू—(बाहर की तरफ देखकर) अरे, भाग जा अभी, वह देख, मालिक आ रहे हैं।

[हुक्का लिए हंसते हुए रामू का वेग से प्रस्थान]

गदा—(खड़े होकर, मन-ही-मन) बुड्ढे ने इस समय आकर सब चौपट कर दिया ! ओ हो ! आज बूढ़े का ठाठ देखकर हंसी आती है। शान्तिपुरी धोती, जामदनी मिर्ज़ई, ढाकाई चद्दर, जरीदार जूते, फिर सिर पर ताज ! हा, हा, हा !

[भक्त बाबू का पुनः प्रवेश]

भक्त—अरे गदा !

गदा—जी ई··ई !

भक्त—क्या वे लोग आ गए हैं ?

गदा—जी, अब तक शायद आ ही गए हैं, आप चलिए।

भक्त—तू पहले जाकर देख के आ।

गदा—बहुत अच्छा, हुजूर ! **(प्रस्थान)**

भक्त—**(मन-ही-मन)** इस ताज का पहनना ठीक ही हुआ। मुसलमान औरतें यह सब पसन्द करती हैं। फिर इससे और एक फायदा है, सिर के बालों का गुच्छा ढक जाता है। **(ऊंची आवाज देकर)** अरे रामू !

(नेपथ्य से) जी, आया सरकार।

भक्त—मेरा हैण्डबैग और आईना तो ले आ ! **(मन-ही-मन)** थोड़ा इत्र डाल लूं। मुसलमानों के छोटे-बड़े, बहू-बेटी सब इत्र की खुशबू पसन्द करते हैं। छोटी शीशी साथ में ले जाऊं। क्या मालूम, अगर बहू के बदन से प्याज की बू आए, थोड़ा इत्र डालकर उस बू को भगा सकूंगा।

[बक्स व आईना लिए रामू का पुनः प्रवेश]

भक्त—**(आईने में चेहरा देखता है, फिर इत्र की शीशी लेकर बक्स बन्द करता है)** यह ले, देख, कोई आए तो बोलना कि मैं जाप में बैठा हूं।

रामू—जी, अच्छा ! **(प्रस्थान)**

भक्त—**(जरा घूमकर देखता है, फिर मन-ही-मन)** आह ! गदा हरामजादा अभी तक भी नहीं आया ! साला, पहले नम्बर का आलसी है !

[गदा का प्रवेश]

क्या हुआ रे ?

गदा - जी, बुआजी उसे ले गई हैं। आप चलिए !

भक्त—तो फिर चल !

[दोनों का प्रस्थान]

द्वितीय दृश्य

(एक बाग के बीच शिवजी का टूटा मन्दिर)

[वाचस्पति व हानिफ का प्रवेश]

वाच.—अरे हानिफ !

हानि.—जी !

बाच.—यही तो वह शिव मन्दिर है, अब तक भी तो कोई नहीं आया। चल फिर, हम लोग उस पीपल के पेड़ के ऊपर इस मौके पर छिप जाएं और चुपचाप बैठे रहें !

हानि.—जैसी आपकी मर्जी !

वाच.—लेकिन सुन, जब तक मैं कोई इशारा न करूं, तू चुपचाप बैठे रहना।

हानि.—ठाकुर, सो तो रहूंगा, लेकिन मेरे सामने ही कमीना मेरी बीवी के बदन पर हाथ डाले, या बेइज्जती करे, तो उसी दम मैं उस बेहूदे का सिर फोड़

डालूंगा। अब तो मुझे और कोई डर नहीं है, मैंने तो दूसरी जगह घर बसाने का ठान लिया है।

वाच.—(**मन-ही-मन**) साले ! यों तो साक्षात् यमदूत जैसा है, तिस पर मारे गुस्से के आग-बबूला है, न-जाने आज क्या हुज्जत मचा दे ! (**प्रगट रूप से**) देख हानिफ, इस तरह गुस्सा होने से नहीं चलेगा, फिर सब चौपट हो जाएगा, तू जरा धीरज से काम ले।

हानि.—अरे रहने दो तुम्हारा धीरज, ठाकुर ! मेरा लहू गर्म हो चला है, और दोनों हाथ भी अशांत हो उठे हैं। एक मर्तबा साला मिल जाए, उसकी बेतहाशा मरम्मत करके, गाँव छोड़ चला जाऊंगा।

वाच.—न बाबा, फिर तो मैं इस मामले में शामिल न हूं, मेरी बात अगर तू नहीं मानता, तो मैं चला (**जाने को होता है**)।

हानि.—अरे ठाकुर, रुक जाओ। इतना गुस्से क्यों होते हो ? भला, यह बताओ, मैं अगर यहां चुपचाप रहूं तो आखिर में मैं साले की जूतों से कैसे खबर ले सकूंगा ?

वाच.— हाँ, हाँ, जरूर ले सकेगा !

हानि.—फिर ठीक है, चलो, जैसा तुम कहोगे वैसा ही मैं करूंगा।

वाच.—तो चल, उस पेड़ पर चढ़कर चुपचाप बैठ जा।

[**दोनों का प्रस्थान**]

[फतीमा व पूंटी का प्रवेश]

फती.—अरी पूंटी बहन ! यह तुम मुझे कहां ले आईं ? नहीं बहन, मुझे बड़ा डर-सा लग रहा है, कहीं कोई सांप ही काट ले या और कुछ हो जाए।

पूंटी—अरे, यही तो वह शिव मन्दिर है, फती, अब तो मान लिया न, कोई पाँच-दस मील नहीं जाना पड़ा। सुन, यहीं खड़ी हो जा। मालिक आते ही होंगे।

फती.—ना बहन, कैसा अंधेरा है, मुझे बहुत डर लग रहा है। इस जंगल के बीच हम दो औरतें कैसे रहेंगी ?

पूंटी—(मन-ही-मन) फती सच ही बोल रही है। कैसा अंधेरा, सारा शरीर छमछमा रहा है। फिर सुना है, यहाँ भूत-प्रेत का भी डर है (पीछे की तरफ ताकती हुई) ओः अब भी बाबू का आना नहीं हुआ।

फती—तुम अगर रहना चाहती हो, तो रहो, मुझसे और रहा नहीं जाता। (जाना चाहती है)

पूंटी—(फती का हाथ पकड़कर) अरी छोकरी, मैं तो हूं, डर काहे का है ? (मन-ही-मन) मेरा क्या और वह वक्त है ? फल पक कर सख्त हो जाने से उसे और कौन खाता है ? (प्रगट रूप से) बहन, जरा और रुक जा। मालिक आते ही होंगे।

फती—नहीं बहन, मैं रुपया-सुपया नहीं चाहती, मेरे शौहर को अगर इस बात का मालूम हो जाए तो मुझे जिन्दा नहीं छोड़ेगा !

पूंटी—तू खामखा डर रही है। उसे कैसे मालूम होगा, बोल? क्या वह यहां देखने को आएगा? फिर इतना डर काहे का है? जरा ठहर जा न! (चौंक कर, मन-ही-मन) आई माँ, उस मन्दिर में से कैसी आवाज आई? राम, राम! (फती को पकड़ती है)

फती.—(उदास होकर) तुम अगर मुझे नहीं छोड़तीं तो मैं मजबूर हूं। अब अल्लाह की मर्जी! तो चलो, हम उस मन्दिर के अन्दर जाएं। कौन जाने यहां हमें कोई कहीं से देख लें।

पूंटी—नहीं, नहीं, इस जगह पर ही अच्छा है (मन-ही-मन) ओहो, वह भला मर गया क्या?

फती.—(चौंककर) अरी पूंटी बहन, वह देख तो सही, दो आदमी इधर ही आ रहे हैं न? बहन, मैं उस मन्दिर में छिप जाती हूं।

पूंटी—नहीं री नहीं, यहीं खड़ी रह। मैं देखती हूं। शायद हमारे मालिक ही होंगे। (देखकर), हां, हां वे ही तो, साथ में गदा भी आ रहा है। अब राहत मिली।

फती.—ना बहन, मैं चली।

पूंटी—अरी ठहर न, कहां जाएगी?

[भक्त व गदाधर का प्रवेश]

पूंटी—ओः मालिक, कब से आपकी राह देख रही हैं हम लोग, खड़े-खड़े पैर दुख रहे हैं। आपने बड़ी देर लगा दी, हम लोग लौटने की सोच रही थीं।

भक्त—हां, जरा देर हो गई। ओः हो! यह मेरी मन-

मोहिनी आ गई है ! (मन-ही-मन) आ हा, मुसलमानी है तो क्या हुआ ? छोकरी की सूरत तो लक्ष्मी की-सी है। यह तो फूस की झोपड़ी में सोने का टुकड़ा ! (प्रगट रूप से गदा को लक्ष्य कर) गदा, तू जरा आगे बढ़कर खड़ा हो जा, देखना इधर कोई नहीं आ सके !

गदा—जी मालिक !

भक्त—अरी पूंटी, यह तो बड़ी शर्मीली मालूम हो रही है। क्यों, मेरी तरफ एक बार आंखें उठाकर भी नहीं देखती ! (फती के प्रति) सुन्दरी, मुंह उठाकर जरा बात तो निकालो, अपना जीवन सार्थक कर लूं। हरि बोल, हरि बोल—इसमें शर्म काहे की ?

गदा—(मन-ही-मन) वह नाम फिर क्यों लेते हो मालिक ? अब तो अल्लाह का नाम लिया करो।

भक्त—ओ हो ! ऐसी हसीन क्या हानिफ के घर सोहती है ? राजरानी के रूप में मेरे पास ही इसकी यथार्थता है—

मोर चकवा सूत चातक नहीं पाते
विधि-विधान से पका आम कौए ही खाते।

री विधुमुखी, तुम्हारा बदन-चाँद देखकर आज मेरा मन-कमल खिल उठा है।

पूंटी—(मन-ही-मन) आज के बाद कल मालिक उस पार जाएंगे, फिर भी रस डगमगा रहा है। हाय, राख में आग कैसे इतने दिनों तक छिपी रहती है ?

(प्रगट रूप से) मालिक, यह मुसलमान की लड़की है, यह भला इन सब बातों को क्या समझती है ?

भक्त—अरी, तू चुप कर न !

पूंटी—बहुत अच्छा !

फती.—पूंटी बहन, मैं तेरे पैर पड़ती हूं। तू मुझे यहां से ले चल।

पूंटी—फिर वही बात ! मालिक इतनी बार तुझसे बोल रहे हैं, फिर भी तेरा मन नहीं भरा ? बात तो यह है कि तू मुसलमान है न ? कहते हैं —'इमली मीठी नहीं होती, मुसलमानी कभी नहीं पटती।' मालिक को पाकर ब्राह्मण-कायस्थ की कितनी बेटियाँ अपने को धन्य मानती हैं; तू तो मुसलमान है न ! तेरी कोई जात है, न कोई धर्म है ! अपना नसीब समझ कि तुझ पर मालिक को नेक नजर पड़ी है।

फती.—नहीं बहन, बहुत देर तक मैं घर छोड़े आई हूं, मेरा शौहर अभी आकर मेरी तलाश करेगा, बहन, मैं चली।

भक्त—(दामन पकड़कर) प्यारी, अगर तुम चली जाओगी तो मैं कैसे जिन्दा रहूंगा। तुम मेरी प्राण हो, तुम मेरा दिल हो, तुम मेरे चौदह पुरख हो !

तुम प्राण हो, तुम धन हो, तुम मन, तुम जन
पास में रहती हो, स्वर्ग-सा होता है वह क्षण,
हैं और कितने जन, पर हेय नजर आती,
संसार में तुम ही अच्छी हो, बाकी सब कालो।

सुनो प्यारी, बुड्ढा समझ मेरी अवहेलना मत करो। तुम अगर चली जाओगी तो मेरे प्राण नहीं रहेंगे।

गदा—(मन-ही-मन) सच ही लड़की तुम्हारे प्राण हैं, मालिक !

पूंटी—मालिक, फती को यह सोचकर डर-सा लग रहा है कि उसे यहाँ कोई देख लेगा, मन्दिर के भीतर जाना ही बेहतर है।

भक्त—ऐं, मन्दिर के भीतर ! (सोचकर) हाँ, टूटे हुए शिव जी में शिवत्व नहीं रहता, शास्त्र में ऐसा ही कहा जाता है। खासकर ऐसी अप्सरा के लिए हिन्दूपन छोड़ना कुछ नहीं है।

[नेपथ्य से भारी आवाज आती है, 'अच्छा, तब यह सब हो रहा है. पाखंड, नराधम, दुराचार ?' सब डर जाते हैं।)

भक्त— (डर से चारों तरफ देखता है) ऐं, मैं…मैं नहीं। अरे बाबा ! यह क्या ? कहां जाऊं ?

पूंटी—(कांपती हुई) राम, राम ! राम, राम ! मैं तभी सोचती थी- राम, राम, राम !

भक्त—अरे गदा ! पास में आ न !

गदा—(कांपता हुआ) पहले अपने को तो बचाऊं ! फिर…।

[नेपथ्य से हुंकार का शब्द]

पूंटी—ई-ई-ई (गिर पड़ती है और बेहोश हो जाती है)।

भक्त—राधेश्याम ! राधेश्याम ! हाय राम, अब क्या होगा ?

[नेपथ्य से, अब देख, क्या होता है ?]

भक्त—(हाथ जोड़कर करुण स्वर में) बाबा ! मैं कुछ नहीं जानता, दुहाई बाबा, मुझे माफ कर दो। (जमीन पर गिरकर प्रणाम करता है)

[होंठ और कपोल ढककर हानिफ गाजी का प्रवेश, गदा को लगातार तमाचे जड़ता है। गदा जमीन पर गिर पड़ता है, इसके बाद भक्त की पीठ पर बैठकर घूंसे लगाता है और पूंटी को लात मारकर भाग जाता है।]

भक्त—ऐं, ऐं, ऐं !

[नेपथ्य से वाचस्पति रामप्रसाद का गीत]

'माँ का यही तो विचार रहा,
विचार किया आनन्दमयी ने,
यही तो विचार रहा।'
(प्रवेश करता है)

गदा—(वाचस्पति को देखकर) दादा ठाकुर, आप आ गए हैं ! अब बच गया। सुनते हैं, ब्राह्मण के पास भूत नहीं आता। (पीठ पर हाथ फेरता हुआ) अरे बाप ! भूत का हाथ भी कितना कड़ा होता है !

वाच.—यह क्या ? मालिक जी इस तरह जमीन पर गिरे हुए हैं ? क्या हुआ है ? ऐं !

भक्त—(वाचस्पति को देखकर उठ खड़े होते हैं) कौन है ? वाचपोत भइया क्या ? अरे भाई, आज भूत के हाथ से बाल-बाल बच गया। तुम आ पहुंचे, बहुत अच्छा हुआ।

पूंटी—(होश में आकर) राम, राम, राम, राम !

गदा—अरी बुआजी, भूत भाग गया है, डरने की कोई बात नहीं। अब उठो !

पूंटी—(उठकर) भाग गया है ! ओः, बच गए हम। फिर चल बेटा, और यहां मत रहना। मैं अगर जिन्दा रहूं, बहुत कमा लूंगी। (वाचस्पति को देखकर) आई मां, भरचाज आ गए हैं !

वाच.—मालिक, यही इस रास्ते से जा रहा था, आदमी की कराहट सुन इधर चला आया। फिर कहिए मामला क्या है ? आप भी इस वक्त यहां क्यों ? फिर ये लोग भी क्यों आए हैं और यह तो हानिफ गाजी की जोरू है ! यह इस वक्त यहाँ क्यों ?

भक्त—(मन-ही-मन) एक ओर से बच गया तो दूसरी ओर से भारी आफत आ खड़ी हुई ! क्या करूं ? (प्रगट रूप से विनम्र भाव लेकर) भाई, तुम तो सभी समझ गए हो और शर्मिन्दा न करो। जेसा काम मैंने किया उसी का उचित फल भी मिला है। तुम्हारे सामने हाथ जोड़े बोल रहा हूं, यह भीख मुझे दो कि किसी को इस बात का पता न हो। इस बुढ़ापे में यह बात किसी को मालूम हो जाने से मेरे कुल-मान पर कलंक का टीका लग जाएगा। तुम भाई, मेरे परम आत्मीय हो, इससे ज्यादा और क्या बताऊं।

वाच.—यह क्या कह रहे हैं मालिक ? आप बड़े आदमी हैं, राजा हैं, और मैं एक गरीब ब्राह्मण हूं, फिर वह

देवत्य जमीन के खो जाने के बाद से दोनों वक्त खाना तक नहीं जुटता, तो फिर आपके आत्मीय बनने का सौभाग्य क्या मेरा है ?

भक्त—मुझे सब-कुछ मालूम हो गया भाई ! कल ही मैं तुम्हारी देवत्य जमीन लौटा दूंगा; और सुनो, तुम्हारी मां के श्राद्ध पर मैंने बहुत थोड़ा ही रुपया दिया था, मैं नकद पचास रुपये और भी दूंगा, लेकिन याद रखना आज की बात किसी तरह प्रगट न होने पाए !

वाच.—(मुस्कराकर) हुजूर, जो काम आपने किया है, वह वाकई बुरा काम है। मगर आपने जब ब्राह्मण को कुछ दान देना स्वीकार किया है तब तो एक प्रकार से उस काम का प्रायश्चित भी आपने कर डाला, तो फिर मुझे इस बात का और जिक्र करने की जरूरत भी क्या है ? इसलिए आप बेफिक्र रहें।

[स्वाभाविक वेष पहने हानिफ गाजी का प्रवेश]

हानि.—मालिक सलाम !

भक्त—(बड़े ही व्याकुल भाव से, मन-ही-मन) यह फिर क्यों ? फिर एक और बला आ खड़ी हुई !

हानि.—(हंसता हुआ) मालिक, घर लौटकर जब मैंने फतीमा की तलाश की, तो सभी ने बताया कि वह पूंटी के साथ टूटे मन्दिर की तरफ गई है, सो उसे ढूंढते-ढूंढते यहां आ पहुंचा हूं। आप जो मुसलमान होना चाहते हैं इस बात का पहले पता लग जाता तो

कोई फिक्र नहीं था। फती की बात छोड़िए, उससे भी हसीन लड़कियों को मैं आपके पास पहुंचा देता। इसलिए आपने इतने झमेले क्यों उठाए? तोबा, तोबा!

भक्त—(सोचकर विनम्र भाव से) बेटा हानिफ, मैं सब समझ गया, मैंने नाहक तुम पर जुल्म किया था, बाकायदा उसकी सजा मुझे मिल गई—फिर वह बात क्यों छेड़ते हो? अब उसका अंत करो। मैं तुम्हें कुछ देने को भी तैयार हूं। लेकिन यह बात किसी को मालूम न हो जाए, यही भीख मैं तुमसे मांग रहा हूं। बेटे, मैं तेरे हाथ जोड़ता हूं।

हानि.—यह कैसी बात, मालिक! आप जो मुसलमानों को इतनी गाली-गलौच देते थे, अब आप खुद ही मुसलमान बनने चले हैं, इससे बड़ी खुशी की बात और क्या हो सकती है? हुजूर, यह बात तो आप की जात-कुटुम्ब को जरूर कहनी पड़ेगी।

भक्त—सत्यानाश! क्या बोलता है हानिफ! अरे, वाच-पोत भाई, अब तो मारा गया। भाई, तुम अगर न बचाओ तो मेरी सारी लुटिया डूबी! हानिफ को एक बार समझाओ तो सही।

वाच.—(जरा हंसकर) अरे हानिफ, एक बार इधर आ तो, एक बात कहूं। (हानिफ को एक तरफ ले जाता है और चुपचुप कुछ बातें करता है)

भक्त—राधे, राधे, राधे! ऐसी उलझन में भी आदमी

कभी फंस जाता है ! एक तो बेहद बेइज्जती, तिस पर जात खोने का डर ! मुझे तो ऐसा लग रहा है कि जमीन अब अगर दो हिस्सों में बंट जाए तो मैं उसमें घुस जाता। जो भी हो, यह मैं सौगंध खाकर कह रहा हूं कि ऐसा काम आइन्दा कभी न करूंगा।

फती.—(आगे बढ़कर हंसती हुई) क्यों हुज़ूर, मुसलमानी लड़की अब और पसन्द नहीं हो रही है क्या ?

भक्त—भाग यहां से, हरामजादी, तेरे लिए ही तो मेरा यह सत्यानाश हुआ !

फती.—सो क्यों मालिक ? अभी कुछ लमहे पहले मैं आप का कलेजा थी, और भी क्या-क्या होने लगी थी, और अब मुझे निकालना चाहते हैं !

भक्त—सिर्फ तुझे निकालना क्या ? इस बुरे काम को भी आज से मैंने निकाल दिया। इतना होते हुए भी अगर भक्तप्रसाद आपे में न आए तो उससे बढ़ कर गधा और कोई नहीं है।

गदा—(धीरे से) अरी बुआजी, अब तो लुटिया डूबी !

पूंटी—डूबने दो बेटा ! ताकत रही तो भीख मांगकर खाएंगे। कौन जानता था कि मुसलमान लड़कियों के साथ भूत भी रहता है ? फिर मैं क्या इस काम को अपने हाथ में लेती ?

वाच.—(आगे बढ़कर) मालिक, आप हानिफ को दो सौ रुपये दीजिए, सब झंझटों का खात्मा हो जाएगा।

डा. ढिल्ली स्मण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
१००५

भक्त—दो···सौ·· रुप·· ये ! अरे बाप रे ! मैं तो जी-जान से मारा जाऊंगा ! बाचपोत भाई, थोड़ा कम-सम नहीं होगा ?

बाच.—नहीं जी, इससे कम किसी सूरत से नहीं होगा।

भक्त—(सोचकर) अच्छा, तो ठीक है, चलो, वहीं देंगे। मैंनें सोचकर देखा कि ऐसे काम का नतीजा ऐसा ही होना चाहिए। जो भी हो भाई, तुम लोगों के हाथ आज मुझे अच्छा सबक मिला। यह उपकार मैं कभी नहीं भूलूंगा। मैं जैसा घोर गुनाहगार था उसकी उचित सजा भी मुझे मिली है। अब नारा-यण से यही प्रार्थना करूंगा कि मेरी वैसी कुमति फिर कभी न हो—

बाहरी था रूप साधु का
भीतर था नहीं धर्म का नाम
पुण्य जरा भी था नहीं
करते थे बड़े नीच काम।
सबक मिला उसे मारपीट से
हड्डी पसली हुई एक
जैसा काम है वैसा फल
जवान बूढ़े का है यह भेख ॥

[सभी का प्रस्थान]

[पर्दा गिरता है।]

C39.832
Fe 34C I